पंचम अध्याय

फुटकल कवि और आचार्य रामचंद्र शुक्ल के इतिहास लेखन के अन्तर्विरोध

साहित्य का इतिहास लेखन एक जटिल प्रक्रिया है जो प्रायः एक हजार वर्षों के इतिहास साक्ष्यों के आधार पर किया गया है। साहित्येतिहास लेखन कहां से आरम्भ करें, भाषा का रूप व समय कैसे निर्धारित करें, साहित्यिक धाराएं कौन-कौन सी हैं, काल निर्धारण तथा नामकरण आदि समस्याओं को ध्यान रखते हुए इतिहास लेखन कार्य निष्पादित किया जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के साहित्येतिहास लेखन में काल विभाजन, नामकरण, तथा फुटकल कवियों को लेकर काफी अन्तर्विरोध हैं। हिंदी साहित्य के अनेक इतिहास लिखे गए हैं लेकिन हिंदी का आरंभ कहां से हुआ? किन सामाजिक परिस्थितियों में हुआ? क्या अपभ्रंश हिंदी के निर्माण में सहायक है? हिंदी के निर्माण में खड़ी बोली के अतिरिक्त कौन-कौन सी भाषाओं की भूमिका रही है? आदि प्रश्न आज भी बने हुए हैं। वीरगाथा काल में ऐसे कवि हैं जो वीर काव्य न रचते थे, भक्तिकाल में ऐसे कवि हैं जो भक्तिकाव्य न रचते थे। रीतिकाल में ऐसे कवि हुए हैं जो केवल रीतिकाव्य नहीं रचते थे। ऐसे कवियों की सामान्य प्रवृत्तियों तथा वर्गीकरण को लेकर भी आचार्य रामचंद्र शुक्ल के इतिहास लेखन में अन्तर्विरोध हैं।

5.1. हिंदी साहित्य के इतिहास में फुटकल कवियों का स्थान :

साहित्येतिहास लेखन में फुटकल उन कवियों को माना गया है जो मूल प्रवृत्ति (विशेष कालखंड की प्रमुख प्रवृत्ति) के नहीं हैं जैसे वीरगाथा काल में वीरकाव्य प्रवृत्ति से अलग कवि फुटकल हैं। शब्दकोश के अनुसार भी फुटकल का शाब्दिक अर्थ 'अलग या अयुग्म' ही है, किंतु कई कवियों की

साहित्यिक रचनाओं को देखते हुए साहित्य में फुटकल शब्द न्यायसंगत नहीं प्रतीत होता। सामान्यतः इन कवियों के लिए इतिहास लेखन में फुटकर, अन्य कवि आदि शब्द प्रयोग हुए हैं। लेकिन गंभीरता से जब हम साहित्य का अध्ययन करते हैं तो पाते हैं कि यही फुटकल कवि हमें प्रत्येक युग के अंत में आगामी युग की प्रवृत्तियों का आभास कराते हैं। इन्हीं फुटकल कवियों में हमें दो कालखण्डों के बीच तीसरी प्रवृत्ति भी दिखाई देती है। किसी कालखंड के फुटकल कवियों के अध्ययन में हमें दिखता है कि ये कवि अपनी भाषा, नवीन काव्य-शैली के आधार पर प्रयोगों के कवि हैं। कोई भी भाषा तथा प्रवृत्ति एकदम से आरंभ नहीं होती, अपितु उसके निर्माण में एक निश्चित समय लगता है। एक कालखंड एक निर्धारित समय के बाद खत्म होकर दूसरा कालखंड आरंभ हो जाता है किंतु प्रवृत्ति के साथ ऐसा नहीं है। गौर से देखने पर मिलता है कि पहले कालखंड के फुटकल कवि दूसरे कालखंड की प्रमुख प्रवृत्ति के पहले कवि हैं। यूं कह सकते हैं ये कवि संक्रमण के कवि नहीं अपितु संगम के कवि हैं। सामान्यतः आचार्य रामचंद्र शुक्ल के इतिहास ग्रंथ के पृष्ठों की भी बात करते हैं तो फुटकल कवि मुख्य कवियों से ज्यादा पृष्ठों पर हैं। आचार्य शुक्ल ने प्रत्येक युग की एक प्रवृत्ति को प्रमुख मान उसी आधार पर नामकरण किया है, जिससे उस युग की अन्य प्रवृत्तियां सर्वथा उपेक्षित रह गई हैं। इसी कारण भक्तिकाल में लिखे गए वीर-रसात्मक काव्यों को तथा रीतिकाल में रीतिमुक्त कवियों को फुटकल खाते में स्थान मिला।

5.1.1. हिंदी साहित्य के सीमांकन की समस्या :

साहित्येतिहास लेखन के आरंभ से ही काफी अन्तर्विरोध हैं जिसमें सीमांकन की समस्या भी प्रमुख है, हिंदी का आरंभ कहां से माना जाएं तथा कालखण्ड को कहां से शुरू और अंत किया जाए। पर इतिहास ग्रंथों में सभी विद्वानों के मत अलग-अलग हैं। 'हिंदी और साहित्य' दोनों शब्दों के अर्थ एवं इनके आपसी संबंध के बारे में एक स्वच्छ तथा स्पष्ट दृष्टि बनाना आवश्यक है। जब हिंदी का व्यापक

धरातल देखते हैं तो इसमें एक भू-भाग की बहुत सी भाषाएं मिली हुई हैं तथा उनका साहित्य भी मिलता है जिसे हम हिंदी भाषी प्रदेश कहते हैं। सीमांकन की मुख्य समस्या हिंदी के आरंभ को लेकर ही है। यदि अपभ्रंश हिंदी है तो आदिकाल का कालखण्ड काफी पीछे चला जाता है और अगर नहीं है तो हिंदी का उदय या आरंभ कहां से हुआ, ये प्रश्न मुख्य है।

आचार्य शुक्ल आदिकाल के बारे में लिखते हैं, "आदिकाल का नाम मैंने 'वीरगाथा काल' रखा है। उपरोक्त काल के भीतर दो प्रकार की रचनाएं मिलती हैं- अपभ्रंश की और देशभाषा (बोलचाल) की। अपभ्रंश की पुस्तकों में कई तो जैनों के धर्म-तत्व-निरूपण संबंधी हैं जो साहित्य की कोटि में नहीं आती और जिनका उल्लेख सिर्फ ये दिखाने के लिए किया है कि अपभ्रंश का व्यवहार कब से हो रहा था। साहित्य की कोटि में आने वाली रचनाओं में कुछ तो भिन्न-भिन्न विषयों पर फुटकल दोहे हैं जिनके आधार पर उस काल की कोई प्रवृत्ति निर्धारित नहीं की जा सकती।"[1] आचार्य शुक्ल अपभ्रंश की बहुत सारी रचनाओं को साहित्यिक ही नहीं मानते। इसीलिए वे आदिकाल का सीमांकन वहां से करते हैं जहां से उन्हें हिंदी का शुद्ध साहित्य मिलना आरंभ हुआ है, "अपभ्रंश या प्राकृतभास हिंदी के पद्यों का सबसे पुराना पता तांत्रिक और योगमार्गी बौद्धों की साम्प्रदायिक रचनाओं के भीतर विक्रम की सांतवीं शताब्दी के अंतिम चरण में लगता है। भुंज और भोज के समय (सम्वत् 1050) के लगभग तो ऐसी अपभ्रंश या पुरानी हिंदी का पूरा प्रचार शुद्ध साहित्य या काव्यरचनाओं में भी पाया जाता है। अतः हिंदी साहित्य का आदिकाल सं.1050 से लेकर सं.1375 तक अर्थात महाराज भोज के समय से लेकर हम्मीरदेव के समय के कुछ पीछे तक माना जा सकता है।"[2] इसी कालखण्ड के बारे में शुक्ल जी यह भी लिखते हैं, "इस वीरगाथा को हम दोनों रूपों में पाते हैं- मुक्तक के रूप में भी और प्रबंध के रूप में भी। फुटकल रचनाओं का विचार छोड़कर यहां वीरगाथात्मक प्रबंधकाव्यों का ही उल्लेख किया जाता है।"[3]

हिंदी के साथ सभी आलोचक अपभ्रंश को जोड़ते तो हैं किंतु पूर्ण सहमति किसी भी आलोचक की नहीं है । आचार्य शुक्ल सिद्धों, नाथों, तथा जैनियों की भाषा अपभ्रंश मानते हैं, लेकिन उनके ग्रंथों को साहित्यिक नहीं मानते। उनका यही मत साहित्यतिहास में काफी अन्तर्विरोध पैदा करता है। कवियों को साहित्य में जगह नहीं मिल पाई। इसी समस्या के कारण ही आज तक हिंदी के पहले कवि पर संशय और बहस बराबर बनी हुई है । सरहपा के बारे में आचार्य शुक्ल लिखते हैं, "सिद्धों में 'सरह' सबसे पुराने अर्थात वि. सं. 690 के हैं। अतः हिंदी काव्य भाषा के पुराने रूप का पता हमें विक्रम की सांतवीं शताब्दी के अंतिम चरण में लगता है।"[4] यहां भले ही स्पष्ट ना हो लेकिन इस कथन से यही प्रतीत होता है कि हिंदी काव्य भाषा का पहला कवि सरहपा हो सकते हैं किंतु गणपतिचंद्र गुप्त अपने इतिहास ग्रन्थ में लिखते हैं कि, "श्री राहुल सांकृत्यायन ने सरहपा की रचनाओं को प्रकाशित करते हुए इस तथ्य को स्वीकार किया है कि वे अपभ्रंश के कवि थे तथा उनकी रचनाएं मूलरूप में उपलब्ध नहीं हैं, जो पाठ उन्होंने प्रकाशित किया है वह सरहपा की रचनाओं के तिब्बती अनुवाद पर आधारित हिंदी अनुवाद है ।"[5] इस तरह जो आलोचक अपभ्रंश को हिंदी मानते ही नहीं वे सरहपा को अपभ्रंश का कवि मानकर हिंदी से बाहर कर देते हैं। हजारी प्रसाद द्विवेदी भी सरहपा को अपभ्रंश का कवि मानते हैं। विद्यापति की तरह ही स्वयंभू और पुष्यदंत ने भी अपनी भाषा को देशी भाषा माना है। अपभ्रंश और देशभाषा काव्य के बीच असमानता दिखाने का प्रयास अनेक आलोचकों ने किया है। स्वयं अपभ्रंश के कवि स्वयभूं ने अपनी रामायण को ग्रामीण भाषा या 'देशी भाषा' में रचित बतलाया है। नामवर सिंह भी इस पर लिखते हैं, "तात्पर्य यह है कि प्रत्येक युग में साहित्य-रूढ़ भाषा के सामान्तर कोई न कोई देशी अवश्य रही है और यही देशी भाषा उस साहित्यिक भाषा को नया जीवन प्रदान कर सदैव विकसित करती चलती है। छदम की भाषा ने तत्कालीन देशी भाषा से शक्ति अर्जित करके संस्कृत का रूप ग्रहण किया और फिर संस्कृत अपने समय की देशी भाषा के सहयोग से प्राकृत के रूप में ढली। अवसर आने पर प्राकृत को भी अपनी आंतरिक रूढि दूर करने के लिए लोक-भाषा की सहायता लेनी पड़ी; फलतः

भारतीय आर्यभाषा की अपभ्रंश अवस्था उत्पन्न हुई, जिसने आगे चलकर सिंधी, गुजराती, राजस्थानी, पंजाबी, ब्रज, अवधि आदि आधुनिक देशी भाषाओं को जन्म दिया।"[6] यह बात जितनी सत्य है कि सिद्धों और जैनियों में साधना विषयक कविताएं हैं साथ ही सत्य और तत्थ उतना ही प्रभावी है कि इन कवियों के यहाँ लोकजीवन और जीवन के मार्मिक प्रसंगों पर प्रभावकारी कविताएं और काव्य-ग्रन्थ हैं। इन रचनाओं में आज कई ऐसे महाकाव्य हैं जिनका प्रभाव और महत्त्व आज भी है। इसीलिए केवल आंशिक रूप से इन कवियों को देखना उचित प्रतीत नहीं होता है। अपभ्रंश के कवियों की लोकधर्मिता का व्यापक प्रभाव के कारण ही भक्तिकाल के कवि कबीर इनसे खूब प्रभावित हैं। कबीर के यहाँ प्रतिरोध की चेतना का आधार भी अपभ्रंश के कवियों के यहाँ से आया है।

हिंदी साहित्य में सीमांकन की समस्या का थोड़ा सा निवारण होने पर ही हिंदी को अपना पहला कवि, हिंदी जाति का आरंभ तथा भक्तिकाल की एक छाया हमें पहले ही अपभ्रंश में दिखने लगती है। आदिकालीन साहित्य को कुछ यूँ समझ सकते हैं-

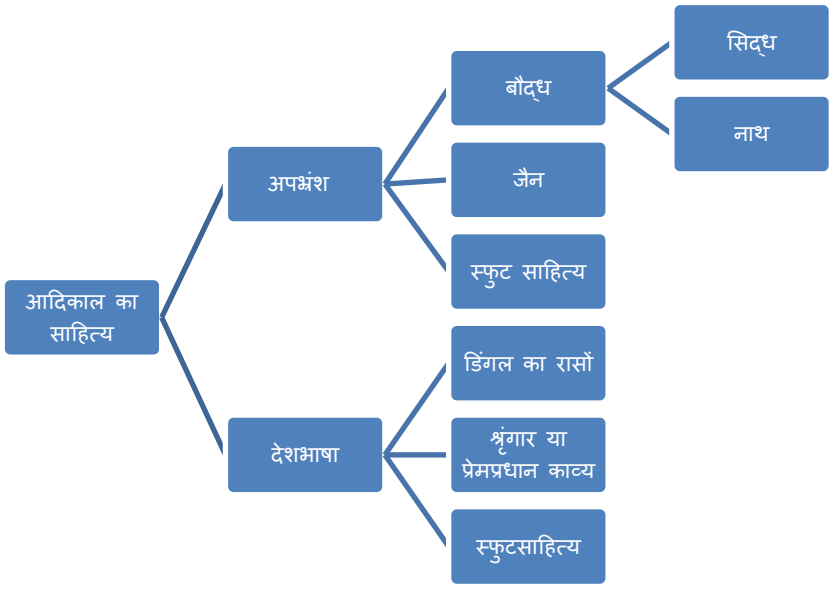

5.1.2. आदिकाल के फुटकल कवि :

आदिकाल में भले ही आचार्य शुक्ल को वीर रस प्रवृत्ति ही प्रधान प्रवृत्ति लगी हो किंतु सबसे ज्यादा प्रवृत्तियों के अध्ययन की जटिलता आदिकाल में ही है। आदिकाल के सम्पूर्ण अध्ययन के बाद ही पता चलता है कि सबसे ज्यादा प्रवृत्तियां और किसी अन्य कालखंड में न होकर आदिकाल में ही हैं। सही अर्थों में विरूद्धों का सामंजस्य आदिकाल में ही है। इसी काल में कहीं जैन, सिद्ध, गोरखपंथी तथा भक्ति की अलग-अलग धाराएं हैं वहीं प्रेमाख्यान, वीरगाथा रासो परम्परा तो कहीं सामंत वृत्तियों की अलग-अलग धाराएं चल रही हैं। विद्यापति तथा अमीर खुसरों ही ऐसे कवि नहीं है जो इस कालखंड के फुटकल खाते में हैं अपितु बहुत सारे ऐसे भी कवि हैं जिन्हें इस खाते में जगह नहीं मिली। अगर साहित्य जनता की चितवृत्तियों का संचित प्रतिबिंब ही है तो अनेक कवियों को भी इतिहास ग्रथ में अवश्य होना चाहिए। आदिकाल में जो कवि प्रमुख हैं अपितु वे आचार्य शुक्ल के इतिहासग्रंथ में मुख्य तथा गौण किसी भी रूप में नहीं हैं, उनका विवरण इस प्रकार से है-

सरहपा :

आदिकालीन साहित्य के प्रारंभिक कवियों में सिद्ध, जैन तथा नाथों का प्रमुख स्थान है। उन्होंने अपने धार्मिक विचारों तथा व्याख्यानों को अभिव्यक्त करने के लिए तात्कालीन जनभाषा को एक माध्यम के रूप में ग्रहण किया। राहुल सांकृत्यायन के अनुसार सरहपा आदि सिद्ध हैं। इनका प्रारंभिक नाम राहुलभद्र और सरोजवज्र था, "कालांतर में इन्होंने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। इन्होंने एक बाण बनाने वाली लड़की से विवाह किया था इसलिए इनका नाम 'सरह' पड़ा। पाद या पा सिद्धों का आदरसूचक शब्द है। राहुल जी इनका समय 780 ई. मानते हैं। डॉ. धर्मवीर भारती ने अनेक स्त्रोतों तथा मतों का परीक्षण करके सरहपा का समय 800-875 ई. अनुमानित किया है। सरह कृत दोहे तथा चर्यागीत 'चर्यागीत कोश' एवं दोहा कोश में संग्रहीत हैं।"[7]

सरहपा की भाषा के सदंर्भ में नामवर सिंह लिखते हैं, "इनकी गीतियां प्रायः देश्यमिश्रित अपभ्रंश में लिखी गई प्रतीत होती हैं। दोहों की भाषा पर भी पूर्वी प्रदेशों की स्थानीय बोली की गहरी छाप है; फिर भी उनका ढाँचा मूलतः साहित्यिक अपभ्रंश का ही है। फिर भी आधुनिक विद्वानों ने सिद्धों की भाषा को लेकर कभी उन्हें पुरानी बंगला का कवि कहा है और कभी पुरानी हिंदी का।"[8] सरहपा जाति से ब्राहमण थे किंतु उन्होंने जातिवाद तथा पाखंडों का लठ्ठ मार ढ़ंग से विरोध किया है,

"बाम्हणहिं म जाणन्त हि भेउ।

एंवइ पढियउ ए चउ बेउ।।

गट्टि पाणि कुस लई पढंत।

धरहीं बइसी अग्नि हुणंत।।

कज्जे विरहइ हुअवइ होमें।

अक्खि डहाविअ कडुए धूमें।।

रंडी-मुंडी अण्ण, वि वेसें।

दिक्खिज्जइ दक्खिण उद्देसें।।"[9]

सरहपा शास्त्र ज्ञान के विरूद्ध थे। वे इसे उसी हद तक उचित समझते थे जिससे इससे मुक्त हुआ जा सके। सरह एक सिद्ध, कवि और अच्छे चिंतक थे। सरहपा को सिद्धों का आदिगुरू भी माना जाता है। सरहपा के शिष्य शबरपा हुए और शबरपा के लूइपा। 84 सिद्धों की गणना के आधार पर लूइपा प्रथम तथा सरहपा छठवें स्थान पर आते हैं। इनकी प्रमुख रचनाएं दोहाकोश, चर्यागीति-दोहाकोश, सरहपाद-गीतिका, उपदेश गीति आदि हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में पाखण्ड का खण्डन किया है। सिद्ध साहित्य

में चित्त, जगत, पंचभूत, माया, निर्वाण, शून्य, सहज, महासुख, महामुद्रा साधना, योधिचित्तरामुत्पाद, चित्त विशोधन, चित्त का हनन, पिण्ड रहस्य आदि विशेष साधनाएं है।

अन्य दोहा :

'बद्धो वावइ दस दिसाहि, मुक्को पिच्चल ट्ण्अ।'

आचार्य शुक्ल के साहित्येतिहास ग्रन्थ में सरह का जिक्र तो है लेकिन केवल नाम मात्र ही। अपभ्रंश और हिंदी के सम्बन्ध के अध्ययन के लिए सरहपा के काव्य की महत्ता को जानना आवश्य है इसीलिए यहाँ इस कवि का विवेचन-विश्लेषण किया गया है।

स्वयंभू :

कवि स्वयंभू जिस घर में जन्में थे उसमें तीन पीढ़ियों से साहित्य साधना हो रही थी। स्वयंभू अपभ्रंश में रामकाव्य के प्रथम कवि हैं और इन्हें अपभ्रंश का वाल्मीकि भी कहा जाता है। इनके पिता मारूतदेव भी कवि थे। इनके लिखे चार ग्रन्थों का उल्लेख होता है-

1 पउम चरिउ (पदमचरित अथवा रामचरित)

2 रिटठणेमि चरिउ (अरिष्टनेमि चरित या हरिवंश पुराण)

3 पंचमि चरिउ (नागकुमार चरित)

4 स्वयंभू छंद।

स्वयंभू को उनके प्रथम काव्य 'पउम चरिउ' से ख्याति मिली। 'पउम चरिउ' पांच कांड तथा तिरासी संधियों के साथ अपभ्रंश का विशाल महाकाव्य है। स्वयंभू की रामायण में रामचरित का आरम्भ

अयोध्याकांड से होता है। कवि व्यक्तित्व से यर्थाथवादी तथा आत्मसौदर्यं के प्रशंसक थे। पउमचरिउ में पांच कांड निम्न प्रकार से हैं -

विद्याधर काण्ड – 20 संधि

अयोध्या काण्ड – 22 संधि

सुंदर काण्ड – 14 संधि

युद्ध काण्ड – 21 संधि

उत्तर काण्ड – 13 संधि

इन संधियों में 83 संधियों की रचना स्वयंभू ने की है तथा शेष सात संधियों की रचना उनके पुत्र ने की है। विद्याधार कांड में संधि कहीं संख्या के रूप में बतलाई गई हैं तो कहीं पर्व शब्द से। ग्रंथ का आरंभ कवि निम्नलिखित वंदना से करता है-

"जे काय वायमणे निधिरिया, जे काम कोह्हुन्नय तिरिया।

ते एक्कमणेण संयभूएण, वंदिय गुरू परमारथरिय।।"[10]

रामकथा की शुरूआत लोक प्रचलित कुछ शंकाओं के समाधान के साथ होती है। महाकाव्य के अनुकूल ही कवि ने अनेक ऋतुओं का वर्णन किया है। 'पउमचरिउ' में घटना बाहुल्य के साथ-साथ काव्य-प्राचुर्य भी दृष्टिगत होता है। काव्यत्व और घटना दोनों इस ग्रंथ में विद्यमान हैं। कवि ने वसंत वर्णन, सन्धा वर्णन, समुद्र वर्णन, गोला नदी वर्णन, वन वर्णन तथा युद्ध-वर्णन बड़ी सुंदरता से किया है।

रस की दृष्टि से 'पउम चरिउ' में करूण, वीर, श्रृंगार और शांत रस ही मुख्यतः दिखाई पड़ते हैं। अपभ्रंश के अधिकतम काव्यों में वीर तथा श्रृंगार रस की बहुलता रहती है। वीरता के साथ युद्ध क्षेत्र में प्रणयीजन के विनाश से करूण रस की उत्पत्ति स्वाभाविक सी प्रतीत होने लगती है। लक्ष्मण के लिए विलाप करते हुए राम का दृश्य भी करूणापूर्ण ही है। भाषा की दृष्टि से कवि ने साहित्यिक अपभ्रंश का प्रयोग किया है। स्वयंभू तथा तुलसी दोनों के राम में अंतर करते हुए बच्चन सिंह लिखते हैं, "स्वयंभू के राम यर्थाथ की धरती पर खड़े हैं; तो तुलसी के राम आदर्श की धरती पर।"[11]

हरिवंश पुराण में चार कांड हैं - यादव, कुरू, युद्ध और उत्तर कांड। इस ग्रंथ में 112 संधियां हैं। इस ग्रंथ के 'यादव कांड' में कवि ने कृष्ण के जन्म, बाललीला, विवाह आदि से संबंधित कथाओं का वर्णन किया है। कुरू कांड में कौरव-पांडवों के जन्म की कथाएं हैं। युद्ध कांड में कौरव पांडव के युद्ध का सजीव चित्रण कवि ने किया है।

बच्चन सिंह कवि के बारे में कहते हैं, "स्वयंभू असाधारण आदमी है। उनकी काव्य दृष्टि समुंद्र की तरह गहरी और आकाश में प्रसारित मेघजाल की तरह व्यापक है। वे काव्य की गहराई समुन्द्र की गहराई से नापते हैं ..... 'महकव्व-णिबंधु व सट्ठगहिरू' और आकाश में पसरी मेद्यमाला को देखकर काव्य की व्यापकता याद करते हैं। ऐसी अछूत और सार्थक उपमाएं कवि के अपने व्यापक और गहरे दृष्टिकोण को स्पष्ट करती हैं।"[12]

अन्य दोहे :

'काऊण पोम चरिय सुद्धय चरिमं च गुणग्धावियं।

हरिवंस -मोह-हरणे सरस्सई सुढिय-ढेइ-ब्व।।' और

'सोहहो हरिणि जिहं णिय पुष्णेहि केम वि चुक्की।

पुष्पदंत :

पुष्पदंत आदिकाल के जैन साहित्य के प्रसिद्ध महाकवि थे। "कालक्रम से अपभ्रंश साहित्य में रामकाव्य के दूसरे अथवा तीसरे महाकवि पुष्पदंत (10वी शताब्दी ईस्वी) हुए। इन्होंने उत्तरपुराण की ग्यारह संधियों (69-79) में रामकथा का वर्णन किया है।"[13] इनके पिता शिवभक्त थे किंतु बाद में इन्होंने जैन धर्म की दीक्षा ली। पुष्पदंत भी पिता के साथ जैन धर्म में आए। इनकी रचनाओं से इतिहासकारों ने अनुमान लगाया है कि ये उत्तरी भारत के ही रहने वाले थे क्योंकि दक्षिणी भारत की भाषाओं का प्रभाव इनके सृजन पर नहीं था । स्वयं कवि ने ही अपने लिए 'अभिमान-मेरू', 'काव्य रत्नाकर' तथा 'कविकुल तिलक' आदि उपाधियों का प्रयोग गौरवतापूर्ण किया है, "जहां मानसिक रूप से वे अपने को इतना गौरव देते थे, वहां वे शरीर से बहुत दुर्बल व कुरूप थे। कसण सरीरें सुख कुरूवें मुद्धाएवि गब्भ सम्भूवें। (उत्तर पुराण) ।"[14]

महाकवि पुष्पदंत को महामात्य भरत तथा उनकी मृत्यु के बाद उनके पुत्र महामात्य नन्न का आश्रय प्राप्त हुआ। स्वभाव से कवि बड़े ही स्पष्टवादी तथा अक्खड़ स्वभाव के थे। इनका काव्य-पक्ष अत्यंत उत्कृष्ट तथा विस्तृत था। "महापुराण में राम की कथा पूर्वापर संबंध से सर्वथा मुक्त एक स्वतंत्र काव्यखंड की तरह दिखाई पड़ती है। कथा के पीछे का उदेश्य है उसमें स्पष्टत-ब्राह्मण परम्परा की रामकथा के विरूद्ध एक प्रकार की प्रतिक्रिया का भाव है।"[15] इन्होंने भी अपने काव्य में ब्राह्मणवाद का खंडन किया है। इनके निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हुए हैं-

1. णायकुमार चरिउ (नागकुमार चरित):

यह ग्रंथ एक खण्ड काव्य है। इसका निर्माण कवि ने महामात्य नन्न की प्रेरणा से किया। इस ग्रंथ में नागकुमार के चरित्र का चित्रण किया है।

2. तिसट्ठी महारूरिष गुणालंकार :

इस ग्रंथ को महापुराण कहा गया है। इसमें दो खण्ड हैं पहला आदिपुराण तथा दूसरा उत्तरपुराण। आदिपुराण में 80 संधियां तथा उत्तर पुराण में 42 संधियां हैं। आदिपुराण में ऋषभदेव (प्रथम तीर्थकर) का चित्रण है तथा उत्तर पुराण में उनके समकालीन पुरूषों तथा 23 तीर्थकरों के चित्रण हैं। यह ग्रंथ महामात्य भरत की प्रेरणा से लिखा गया था।

3. जसहर चरिउ (यशोधर चरित्र) :

यह ग्रन्थ महामात्य नन्न की प्रेरणा से लिखा गया। यह एक खण्ड काव्य है जिसमें चार संधियां हैं। इस ग्रन्थ में यशोधर नामक पुरूष का चित्रण किया गया है।

4. कोश ग्रंथ :

इस ग्रंथ से कवि का भाषा पर अधिकार ज्ञात होता है। यह ग्रंथ देशज शब्दों का एक कोष है।

महाकवि पुष्पदंत 'वागीश्वरीदेवीनिकेतन', 'काव्य पिसल्ल', 'सरस्वती निलय' आदि उपाधियों से भी विभूषित थे। "श्रीसांकृत्यायन तथा हीरालाल जैन का अनुमान है कि 'शिव सिंह सरोज' में हिंदी के जिस आदिकवि पुष्य या 'पुष्प' का उल्लेख है वे कदाचित ये ही थे।"[16] पुष्पदंत ने रामकथा की जो परम्परा उद्धत की है उसमें स्वयंभू के काव्य का परिचय भी है। उन्होंने अपने काव्य में स्वयंभू का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। पुष्पदंत ने स्वयंभू के विपरित अपने व्यक्तिगत जीवन पर ज्यादा प्रकाश डाला है। स्वयंभू तथा पुष्पदंत द्वारा वर्णित रामकथाओं का विश्लेषण करते हैं तो पाते हैं कि पुष्पदंत के काव्य में स्वयंभू की अपेक्षा ज्यादा ब्राहमणत्व विरोधी तत्व हैं। पुष्पदंत के काव्य में बालि वध तथा रावण वध राम नहीं लक्ष्मण करते हैं। दशरथ की मृत्यु पुत्र वियोग में नहीं अपितु राम के वनवास से

लौटने के बाद बतलाई है। हनुमान सीता का पता लगाने में असमर्थ रहे हैं, आदि शंकाओं की पृष्ठभूमि पर पुष्पदंत की रामकथा है।

अन्य पद :

"अत्थमिइ दिणेसरि जिह सउणा। तिह पंथिय थिय माणिय-सउणा।"[17]

(संध्या वर्णन)

"णिय वणिणा कणय-उरहो मयच्छि। दिट्ठा वरेण णं मयणलच्छि।

जो कंतह णह-यलि पिट्ठु राउ। मुहु भावई सो णह-यर-णिहाऊ।।"[18]

(नारी नख-शिख)

"एतह मोल देउ आलिगन। ना तो न आबहुं मम आंगन।

कोइहु गोपिहि पांडुरू चोरली। हरि तनु ते ही जाउ काली।।"[19]

(उत्तर पुराण-कृष्ण बाल लीला)

"भाइंच शिशु कीडा-रज-रंगिउ। हलधरेहि देखिय आलगिंउ।

भुज युगलउ पसरंत निरूधउ। जायउ हर्षे अंग सिनिग्धउ।।"[20]

अब्दुर्रहमान : (अद्दहमाण)

"अब्दुर्रहमान जाति से जुलाहा थे जिनका आविर्भाव काल 1010 ई. माना गया है।"[21] आदिकाल में सिद्ध और जैन कवियों द्वारा धार्मिक जीवन की व्यवस्था की तरफ पूरी ताकत से जनता

का ध्यान आकर्षित किया जा रहा था। उसी समय अब्दुर्रहमान संसार के वस्तुवाद का यथातथ्य चित्रण करके जीवन की उपयोगिता की बात कर रहे थे। इनके काव्य पर भारतीय आदर्शों का सीधा प्रभाव देखने को मिलता है। इनका 'संनेहरासयी' (संदेशरासक) ग्रन्थ प्रसिद्ध है। इस काव्य ग्रंथ में एक वियोगिनी का संदेश अलग-अलग ऋतुओं के उद्दीपन से बड़े ही स्वाभाविक क्रियाकलापों में वर्णित है। "अब्दुर्रहमान की कविता में प्रौढ़ता तथा सजीवता है। इसकी शैली मंजी हुई है। कविता को देखने से ज्ञात होता है कि इन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की होगी, जो अब प्राप्त नहीं हैं।"[22]

अब्दुर्रहमान एक स्वच्छंद तथा श्रृंगारी कवि हैं। कवि का 'संदेशरासक' ग्रंथ कालिदास के मेघसन्देश की तरह है। इसमें संदेश रासक पथिक है जो एक युवती का संदेश उसके पति तक पहुंचाता है। इस ग्रन्थ में कुल 216 छंद हैं। कवि अपना परिचय इस प्रकार देता है-

"पच्चाए सि पहूओ पुव्वसिहो य मिच्छदेसोत्थि।

तह विसए संभूओ आरद्दो मोरसेनस्य।

तह तणयो कुल कमलो पा इयकव्वेसु गोयविसयेसु।

अद्दहमान पसिद्दो संनेहय रासयं रइयं।।"[23]

यहां कवि का नाम 'अद्दहमाण' का मूल टीकाकारों में अब्दुर्रहमान ही दिया गया है। हजारी प्रसाद द्विवेदी कवि के बारे में लिखते हैं, "अपभ्रंश में अब्दुल रहमान नामक ग्यारहवीं शताब्दी के कवि का लिखा हुआ एक विरहव्यापक रासक-ग्रंथ मिला है।"[24]

शोध में प्राप्त कवि जो अपनी कविताई में बहुत ही महत्वपूर्ण है। लेकिन साहित्येतिहास लेखकों ने लोकप्रिय या अतिख्यात कवियों का ही उल्लेख किया है तथापि कुछ कवि अपनी विषय-वस्तु और शैली में बहुत ही श्रेष्ठ और अग्रगामी हैं।

अन्य दोहे :

"तो वुच्चई अहरू पुरतियइ णिवसतिहि तउतणइ घरि।

उप्पांइय केणवि भंति पहु, जा सा कहि म हियह घरि।।

(विरह वर्णन)

होहु नांहि तब विप्रिय-कारउ। जानै तुहुहु संग हम्मारउ।

केवल न जानो काहुउ कारण। जाउ अस्वस्थ प्रियम्म्-निवारण।।

(विरह-वर्णन)

णव गिम्हागमि पहिय । णाहु ज पविसयउ,

करवि करंशुलि सुहसमूह मह णिवसियउ।

तसु अणु-अचि पलुट्टि विरह हवि तविय तणु

वलिवि पत्त णिय-भूयाणि विसंठलु-विहल-मणु।।"[25]

आदिकाल के श्रृंगारी तथा मंनोरंजक साहित्य निर्माण में अब्दुर्रहमान के साथ ऐसे और भी कवि हुए हैं जिनका जिक्र साहित्य में ना के बराबर हो पाया है। इन कवियों में बब्बर (बाहरवीं शती) आमभट्ट (तेरहरवीं शताब्दी), हरिब्रहम (चौदहवीं शती) आदि का नाम हम इतिहास ग्रंथो में देखते हैं। कवि बब्बर

का जिक्र तथा उनकी कुछ फुटकल रचनाएं तो अवश्य साहित्येतिहास में मिल जाती हैं । इनका आविर्भाव काल सं.1107 के आसपास माना जाता है। इन्होंने नारी का सुंदर सौंदर्य-वर्णन किया है-

"सुंदर गुज्जरि णारि, लोअण दीह विसारि।

पीण पओहर भार लोलिअ मोत्तिअ हारि।।"[26]

धनपाल : (घणपाल)

"कवि धनपाल का नाम जैन कवियों में प्रमुख है। इनका कालखंड 1000 ई. के आसपास बतलाया है।"[27] द्विवेदीजी के अनुसार, "इन्होंने 'भविसयत्त कहा' नामक प्रसिद्ध चरित काव्य की रचना की। इनको पुष्पदंत से थोड़ा पहले का माना जाता है।"[28] 'भविसयत्त कहा' के बारे में नामवर सिंह लिखते हैं, "इसका दूसरा नाम 'सुयपंचमी कहा' भी है क्योंकि 'सुयपंचमी' महात्मय के लिए यह कही गई है। बाईस संधियों के इस प्रबंध काव्य में एक तरह से तीन तरह की कथाएं जुड़ी हुई हैं। कथा का पहला भाग शुद्ध घरेलू ढ़ंग की कहानी है जिसमें दो विवाहों के दुखद पक्ष को उजागर किया गया है। इसमें वणिकपुत्र भविष्यदत्त के भाग्य की गाथा है जो अपने सौतेले भाई बंधुदत्त के द्वारा छले जाने पर भी

अंत में जिन-महिमा के कारण सुखी होता है।"[29] इस ग्रंथ में कवि ने आदर्श तथा यथार्थ का मिश्रित चित्रांकन किया है। कथा के पात्र भविष्यदत्त को साधारण आदमी के रूप में प्रस्तुत करने का कवि-प्रयास सफल रहा है। भविष्यदत्त की व्याकुलता का एक दृश्य जिसमें वह काफी कारूणिक है, यदा दशा साधारण मनुष्य की व्याकुलता की अभिव्यक्ति हुबहु करने में सक्षम है,

'गये णिप्फलं ताम सव्वं वाणिज्जं हुवं अम्ह गोत्तम्मि लज्जावाणिज्जं

ण जत्ता ण त्तिं ण गेहं ण कम्मं णश्रीयं ण देहं

ण पुत्तं ककतंण इटठं पि दिटठं गयं गउउरे इरदेसे पइटठं

खयं ज्ञाई नूणं अहम्मेण घम्मं विणटठेम धम्मेण सव्वं अकम्मं'

इसी ग्रंथ में कवि ने नायक को न ही प्रेमासक्त रूप में देखा तथा नहीं भक्त रूप में अपितु एक नई सर्जना करते हुए कर्म के प्रति सजग व्यक्तित्व के रूप में दिखाया है। कवि अपना परिचय देते हुए स्वयं कहता है -

"धक्कउ वणिवंसि भाएसणहों सनु भविण।

धणसिरि देविसुएण विरइउ सरसइ संभविण।"[30]

कवि धनपाल दिगम्बर सम्प्रदाय तथा धक्कड़ वैश्य थे। इनके अलावा जैन साहित्य में दो धनपाल कवियों का जिक्र भी हमें मिलता है।

पहले धनपाल वाक्पतिराज मुंज की कवि सभा के रत्न थे जिन्होंने कवि को सरस्वती की उपाधि भी दी थी, "इनके इस ग्रंथ के अलावा दो ग्रंथ 'पाइअ लच्छी नाम माला' तथा 'तिलक मंजरी' (राजा भोज के लिए लिखा गया था।) है।"[31] 'तिलक मंजरी' एक गद्य काव्य है जो समस्त जैन साहित्य में अपनी शैली में अद्वितीय है। दूसरे धनपाल पालीवाल जाति से थे, "इन्होंने 'तिलक मंजरी' नामक ग्रन्थ की कथा का सार 'तिलक मंजरी कथा सार' नामक ग्रंथ में लिखा। ये दिगम्बर सम्प्रदाय के थे तथा इनका समय विक्रम की तेहरवीं शताब्दी माना जाता है।"[32]

इन सब के अलावा एक धनपाल कवि का जिक्र भी जैन साहित्य में भी होता है, "इस कवि ने 'बाहुबलिदेव चरिउ' नामक ग्रंथ का सृजन किया जिसमें 18 संधियां हैं। इस काव्य की रचना वि. सं. 1454 में मानी जाती है।"[33]

अन्य पद :

"जोव्वण-वियार-रस-वस-पसरि, सो सूरउ सो पंडियउ।

चल-मम्मणवणल्लावएहि, जो परतियाहि ण खडियउ।। ।8।

(मां का उपदेश)

सेर एक यदि पावउ घृता, मंडा बीस पकावउ निता।

टंक एक यदि सेंधा पाया, जो हौं रकंउ सो हौं राजा।।30।।

(कवि का संदेश)

राजा लुब्ध समाज खल, बहु कलहरिनि सेवक धूर्त्तउ।

जीवन चाहसि सुख यदि, परिहर घर यदि बहु गुण-युक्तउ।।"[34]

मूनि कनकामर :

मूनि कनकामर द्वारा 'करकंड चरिउ' नामक ग्रंथ 10 संधियों में लिखा गया है, "इस कृति में करकंड के चरित्र के आधार पर पंचकल्याण विधान नामक व्रतोपवास की महत्ता को दिखाया गया है। इसका रचनाकाल सं. 1122 माना जाता है।"[35] प्रधान कथा के अतिरिक्त कृति में नौ कथाएं और भी आती हैं। प्रथम चार में मंत्र शक्ति का प्रभाव, नीच संगति का बुरा और सद संगति का अच्छा प्रभाव, अज्ञान से आपत्ति आने का दृष्टांत। पांचवी कथा में नायक को नायिका के वियोग में व्याकुल देख पति-पत्नी के संमिलन के संबंध में समझाने के बारे में है। छठी कथा माधव व मधुसुदन के बारे में है। सांतवीं कथा अरिदमन की कथा है जो समुन्द्र में विद्याधरी द्वारा करकंडु के अपहरण किए जाने पर पदमावती ने

शोकाकुल रतिवेगा को सुनाई। आठवीं कथा नवीं कथा का भाग ही है जो एक शुक की कथा के रूप में स्वतंत्र अस्तित्व रखती है और नवीं कथा मुनिराज के द्वारा करकंडु की माता पदमावती को यह बताने के लिए सुनाई कि भवान्तर में नारी अपने नारीत्व का त्याग भी कर सकती है।

"ग्रन्थ में प्रयुक्त अनेक कथाएं तत्कालीन समाज में लोककथाओं के रूप में प्रचलित होंगी किंतु अनेक कथाएं प्राकृत और संस्कृत साहित्य में भी उपलब्ध होती हैं।"[36] काव्य की भाषा में भावानुकूल शब्दों की योजना है। कवि ने प्राकृतिक जगत और मानव जगत दोनों का सुंदर वर्णन किया है।

संयोग -वियोग, वीरता, धर्म-दर्शन आदि प्रसंगों में कवि की भाषा प्रभावोत्पादक है। धर्म - दर्शन के संदर्भ में छोटे-छोटे नीतिपरक वाक्य भी कवि ने कहे हैं-

'गुरूआण संगु जो जण वहेउ हिय इच्छिय संपइ सो लहेइ।'

इस ग्रंथ के बारे में राजमणि शर्मा लिखते हैं, "इस चरित-काव्य में हिंदी भाषा के भिन्न रूप परिलक्षित होते हैं। इससे हिंदी की प्रौढ़ता सिद्ध होती है। यथा- हुयउ-हुआ, डाल-शाखा, फक्कार-पुकार, सयाणु-सयाना, कहाणी-कहानी।"[37] इस ग्रन्थ में कवि ने अंग-प्रदेश-वर्णन, चंपानगरी, सिंहल-द्वीप वर्णन, राज-दर्शक, राजकुमार-शिक्षा, पति-विरह, ऋतु वर्णन बड़े ही सुंदर ढ़ंग से किया है।

अन्य पद्य :

"जो नर पंचानन विकसित -आनन चले पडेऊ।

तो सकलहि लोकहि प्रसरित -शोकहि अति डरेऊ।।

तहॅ देसि खण्णइॅ धण-कण-पुण्णइॅ अत्थि णर्यार सुमणोहरिया।

जण-णयण-पियारी महियलि सारी, चंपा णायइ गुणीभरिया।।"[38]

द्याहिल :

पउमसिरि-चरिउ (पदमश्री-चरित) नामक काव्य द्याहिल कवि द्वारा चार संधियों में रचित है। यह काव्य एक तरफ चरित काव्यों की परम्परा में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका रखता है वहीं दूसरी तरफ प्रेमाख्यानक काव्यों में भी अग्रणी ही है। पउमसिरि-चरिउ न ऐतिहासिक है और न ही पौराणिक बल्कि इसमें मानव जीवन में नैतिक और अच्छे कार्य करके मनुष्य द्वारा मोक्ष प्राप्ति के मार्ग को दर्शाया गया है। इस ग्रंथ में समाज में व्यापत बहु-विवाह, श्रृंगारिक, साज-सज्ज, ज्योतिष विद्या पर विश्वास तथा संत महात्माओं का भली-भांति सत्कार आदि प्रसंग दिखाए गए हैं। प्रेमाख्यानक काव्य की यह परम्परा आगे चलकर हिंदी साहित्य में अपने पूर्णरूप में देखने को मिलती है। कवि की भाषा सरल है।

अन्य पद्य :

"उइदू चंदिकि तारिय यहं

क्उ मित्त-विओउ न दुक्खु देइ

रूइ रूओहामिणी सुंदर कामिणि नवजोवण-सज्जिय रहहु।

खंडिय सुर-दप्पहु गुरू महाप्पहु हत्थि भल्लि न वम्महु।।

(नारी सौदंर्य)

नयणा इव कुमुयह संकुयंति, आसा इव दीइउ डिसउ होंति।

उग्गमइ अरूणु संताउ नाइ, रवि बुद्धि जेम्ब निसि खयहु जाइ।।"[39]

मुल्ला दाउद :

इनका विवेचन विश्लेषण भी शुक्लजी के ग्रन्थ में न के बराबर हुआ है। "खुसरो का नाम अब समस्त उत्तरी भारत में एक महान कवि के रूप में फैल रहा था उसी समय मुल्ला दाउद का नाम भी हिंदी साहित्य के इतिहास में आता है।"[40] उनके द्वारा रचित चंदाबन (चाँदायन) एक प्रेम काव्य है। इसका रचनाकाल अभी तक संदिग्ध ही है। लेकिन इतिहासकारों द्वारा यही अनुमान लगाया गया है कि जैसे अमीर खुसरो ने मसनबियां लिखी हैं उसी प्रकार मुल्ला दाउद ने उन्हीं मसनवियां शैली में अपनी प्रेमकथा लिखी होगी। मुल्ला दाउद के बारे में डॉ. रामकुवार वर्मा लिखते हैं, "अस्तु संधिकाल के उत्तरकाल में डिंगल साहित्य के अस्पष्ट प्रवाह के साथ पांच महान कवि हुए। गोरखनाथ, अब्दुर्रहमान, बब्बर, अमीर खुसरो और मुल्ला दाउद। इन सभी ने भिन्न-भिन्न प्रकार की रचनाएं की। गोरखनाथ ने हठयोग साहित्य संबंधी, अब्दुर्रहमान और बब्बर ने श्रृंगार संबंधी, अमीर खुसरो ने मनोरंजन संबंधी और मुल्ला दाउद ने प्रेमकथा साहित्य संबंधी। इस प्रकार संधिकाल के उत्तरयुग की प्रवृत्तियां किसी प्रकार साम्य नहीं रखती। इतना अवश्य मान लिया जा सकता है कि प्रेम-कथा साहित्य संबंधी रचनाओं का सूत्रपात श्रृंगारपरक साहित्य संबंधी मनोवृत्ति से हुआ।"[41] कवि की कृति का महत्व इसलिए भी अधिक है क्योंकि इसी प्रेम परम्परा को लेकर प्रेम साहित्य के कवि कुतुबन, मंझन, जायसी आदि ने अपनी प्रेम कथाएं लिखीं हैं।

पद्य :

"दाऊद कवि चाँदायनि गाई।

जो रे सुना सो गया मुरझाई।।

धनि ते बोल धनि लेखन हाए।

धनि ते आखर धनि अरथु बिचारा।।

हरदी जात सो चांदा रानी।

सांप डसी हउ सोउ बखानी।।

तउ रे कहा मैं यह खण्ड गावउँ ।

कथा कबित कहि लोकु सुनावउँ ।।

नथन मलिक दुख बात उभारी।

सुनहु कान दइ बहु गुनियारी।।"[42]

5.1.3. भक्तिकाल के फुटकल कवि :

आदिकाल से निकलकर जब भक्तिकाल में जाते हैं तो वहां कबीर का जिक्र करने पर नामदेव का नाम आता है। "इनका जन्म 1267 ई. में बतलाया गया है।"[43] हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं, "नामदेव कबीर के पूर्ववर्ती निर्गुण भाव के साधक थे। कबीर ने अपनी पुस्तक में बड़े गौरव के साथ इनका नाम लिया है और 'गुरूग्रंथ साहब' में इनके भजनों का बड़े आदर के साथ संग्रह किया है।"[44] नामदेव के बारे में शुक्लजी भी ऐसा ही लिखते हैं, "महाराष्ट्र देश के प्रसिद्ध भक्त नामदेव (सं.1328-1408) ने हिंदू-मुस्लमान दोनों के लिए एक सामान्य भक्तिमार्ग का भी आभास दिया। उसके पीछे कबीर ने विशेष तत्परता के साथ एक व्यवस्थित रूप में यह मार्ग 'निर्गुण पंथ' के नाम से चलाया।"[45] निर्गुण पंथ की उपासना के लिए सर्वसामान्य पंथ दिखाने वाले नामदेव ही हैं। इनकी रचनाओं में प्राचीन भक्ति संप्रदाय के ढ़र्रे तथा निर्गुण पंथ के ढ़ंग, दोनों तरह के उदाहरण देखने को मिलते हैं।

पल्टूदास :

कवि अवध के नवाब शुआउदौला और दिल्ली के शहंशाह शाहआलम के समकालीन माने जाते हैं। "ये बाबरी संप्रदाय में दीक्षित थे। इन्होंने जलालपुर(फैजाबाद) के एक काँदू परिवार में जन्म लिया था। .....इनकी समाधि अयोध्या में बनी हुई है जो 'पल्टू साहब का अखाड़ा' नाम से प्रसिद्ध है।"[46] इन्होंने साखी, कुण्डलियां, शब्द, अरिल्ल आदि लिखे जो साहित्यिक दृष्टि में उच्च कोटि के हैं-

"कया तू सोवै बावरा चाला जात बसन्त।

चाला जात बसंत कंत न घर में आये।

घृग जीवन है तोर कन्त बिनु दिवस गंवाये।

गर्व गुमानी नारि फिरै जीवन मदमाती।

खसम रहा है रूढि नहीं तू पठवै पाती।

लगै न तेरी चित कन्त को नाँहि मतावै।

का पर करै सिंगार फूल की सेज बिछावै।

पलटू ऋतु भरि खेलि ले फिरि पछितै है अंत।

क्या सोवें तू बावरी चाला जात बसंत ।।"[47]

इनके बारे में कहा जाता है कि, "इनके विचारों की स्वतत्रंता ने इनके कई दुश्मन बना दिए थे जिसमें अयोध्या के वैरागी भी शामिल थे। वैरागियों ने इन्हें जिंदा ही जला दिया था।"[48] इनके अधिकतम

विचार कबीर के सिद्धातों के अनुसार ही थे। इनके काव्य में नासूत, मलकूत, अबरूत, और लाहूत आदि के वर्णन से लगता है इन्हें सूफीमत की जानकारी भी थी।

सिक्ख कवि :

गुरूनानक देव की परम्परा में अनेक सिक्ख गुरू हुए हैं जिन्होंने अच्छा सृजन किया है। इस परम्परा में कवि शेख फरीद का नाम गुरूनानक देव के बाद आता है। शेख फरीद का नाम गुरूनानक के समकालीन तथा अनुवर्ती संतों में बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। इनका दूसरा नाम शाह ब्रहम या इब्राहिम शाह भी बतलाया जाता है। इनके 130 दोहे तथा चार पद सिक्ख के आदिग्रन्थ में संकलित हैं। हजारी प्रसाद द्विवेदी शेख फरीद के बारे में लिखते हैं, "कबीर आदि संतों में जो लौकिक शैली में परलौकिक प्रेम को व्यक्त करने का प्रचलन है, वहीं फरीद के श्लोकों में भी मिलता है। बड़ी आसानी से ऐसे श्लोकों की तुलना 'ढोला-मारू' के दोहों में पाए जाने वाले श्रृंगारी दोहों से की जा सकती है। एक उदाहरण यह है-

कागा करंग ढढोलिया, सगला खाइया माँसु।

ए दुई नयना मति छुअहु, पिव देखनु की आसु।।"[49]

(क) गुरू अंगद :

इनका जन्म 1504 ई के करीब हुआ था। ये पहले शक्ति की उपासना करते थे किंतु बाद में किसी से आसादीवार की पंक्तियाँ सुनकर नानकदेव के प्रति अनुरक्त हो गए। इन्होंने गुरू नानक देव की रचनाओं को एकत्र किया तथा गुरूमुखी अक्षरों का संस्कार किया। अतिथि सत्कार की लंगर प्रथा इन्होंने ही चलवाई। इनकी मृत्यु 1548 ई में मानी जाती है।

(ख) गुरू अमरदास :

इनका रचनाकाल (1479-1574 ई.) माना जाता है। पहले ये वैष्णव थे किंतु बाद में गुरू अंगद के पदों को सुनकर ये सिख धर्म की ओर आए। इनकी रचनाएं भी 'गुरूग्रंथ साहब' में संकलित हैं जिनमें इन्होंने गुरू की महिमा का महत्व तथा अंहकार की अनर्थकारिता के बारे में बताया है।

इनके पश्चात गुरू रामदास हुए जिनका रचनाकाल (1514-1581ई.) माना गया है। इनकी रचनाओं की संख्या अधिक है। "इनकी रचनाओं में कांताभाव के भजन हैं जो कभी -कभी सूरदास आदि सख्य और मधुर भाव के उपासकों की रचना के साथ तुलनीय हो सकते हैं। इनमें तन्मयता और आत्मसमर्पण के भाव भरे पड़े हैं।"[50]

गुरू अर्जुनदेव सिखों के पांचवे गुरू हुए। इनका रचनाकाल 1563-1606 ई. है। इनका प्रमुख कार्य आदिग्रंथ का संपादन तथा संकलन है। इन्होंने स्वयं घूम-घूम कर पद्यों को इकठ्ठा किया तथा भक्तों को बुलवाकर संतों की अच्छी वाणियों को चुनवाया।

महाराजा पृथ्वीराज :

इनका रचनाकाल सं. 1617 माना जाता है। इन्होंने 'श्रीकृष्णदेव-रूक्मिणी-बेलि', 'श्रीकृष्ण-रूक्मिणी-चरित्र' तथा 'प्रेमदीपिका' नामक ग्रथों का निर्माण किया । इनको काफी उत्कृष्ट कवि माना गया है-

पद्य :

"प्रेम इकगी नेक-प्रेम गोपिन को गायो;

वन तन विरह विलाप सखी ताकी छवि छायो।

ग्यान लोग वैराग मधुर उपदेसन भाख्यो;

भक्तिभाव अभिलाष मुख्य बनितन मनु राख्यो।।"[51]

5.1.4. रीतिकाल के फुटकल कवि :

रीतिकाल तक आते आते फुटकल कवि अन्य कवि में बदल जाते हैं। उनकी इस पद्धति से समझा जा सकता है कि उन्होंने फुटकल शब्द 'मात्रा' के अनुसार दिया है; जहाँ दूसरी प्रवृत्ति के कवि कम हैं वहां उन्हें 'फुटकल' नाम दिया है तथा जहाँ ज्यादा हैं वहां 'अन्य कवि'। इसका उदहारण हम रीतिकाल के संदर्भ में देख सकते हैं। जो कवि महत्वपूर्ण रहे हैं तथा जिनका जिक्र या तो हुआ नहीं या बहुत कम हुआ है, उनका विवरण इस प्रकार से है-

कलानिधि :

इनका आविर्भाव काल सं. 1761 है। इन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। ये बूंदी के राव बुद्धिसिंह के आश्रित कवि थे। इनके ग्रन्थों का वर्णन इस प्रकार है-

1. "श्रृंगार रस माधुरी :

   श्रृंगार रस का व्यापक वर्णन।

2. वाल्मीकि रामायण:

बालकांड, युद्धकांड, उत्तरकांड, वाल्मीकि रामायण के इन तीन कांडों का पद्यबद्ध हिंदी अनुवाद।

3. रामायण सूचनिका :

   इसमें रामायण की प्रधान-प्रधान घटनाओं की पद्यात्मक सूची।

4. वृत्त चन्द्रिका :

छंद शास्त्र का वर्णन। मेरू, मर्कटी आदि के वर्णन चित्र रूप में किए हैं।

5. समस्या पूर्ति :

   अनेक समस्यापूर्तियों का वर्णन।"[52]

कृपानिवास :

इनका आविर्भाव काल सं. 1843 माना जाता है। ये राम के उपासक थे तथा इनके सभी ग्रंथ धार्मिक सिद्धांतों पर हैं।

इनके प्रमुख ग्रंथ इस प्रकार हैं-

1. समय प्रबंध :

   इस ग्रन्थ में सीताराम की आठ पहर की लीलाओं का ध्यान तथा उनकी उपासना का जिक्र है।

2. भावना पचीसी :

   इसमें श्रीराम तथा सीता की सखियों का वर्णन तथा प्रातःकाल की क्रियाओं का उल्लेख है।

3. जानकी सहस्त्रनाम :

   जानकी के सहस्त्र नामों का वर्णन।

4. लगन पचीसी :

   श्री राम के प्रेम की लगन संबंधी पद।

इनके अतिरिक्त कवि के 15 ग्रंथ और भी हैं जो साधारण तथा सरल भाषा में हैं।

शम्भुनाथ : (राजा शम्भुनाथ सिंह सोलंकी)

इस नाम से रीतिकाल में कई कवि हुए हैं। इनमें से तीन का वर्णन आचार्य शुक्ल कर चुके हैं। इन्हें शंभु कवि, नाथ कवि तथा नृप शम्भु आदि कई नामों से जाना जाता था। 'शिवसिंह सरोज' में "इनका उत्पत्तिकाल सं.1638 के आस पास"[53] बलताया है। लेकिन इनका कविताकाल सं.1707 के आसपास माना गया है। इनके नायिका भेद के बहुत छंद मिलते हैं। इस महाकवि के काव्य में भाषा तथा भाव दोनों का चमत्कार देखने को मिलता है-

पद्य :

"रूठि उठै, उठि बैठै मरू, झिझकारै, झुकै बिहॅसै मुख फेरै

दूनी ह्वै जाइ छुए अंचरा, छरकै फुफूंदी के छरा तन हेरे

चेरे से कै लिए 'संभु' सदा, गृह काज अकाज के जाति न नेरे

बाल के ख्यालहि में नंदलाल रहैं छकि रोज, रहैं घर घेरे।"[54]

कविरानी चौबे :

इनका समय 1760 के आसपास बतलाया जाता है। इन्होंने स्फुट काव्य का सृजन किया है। कहते हैं इनके पति राजा के साथ काबुल जाने वाले थे तब इन्होंने निम्न छंद उनके पास लिखकर भेजा था -

"मैं तौ यह जानी ही कि लोकनाथ पाय पति,

सग ही रहौगी अरधग जैसे गिरजा,

एते पै विलच्छन ह्वै उत्तर गमन कीन्हों

कैसे कै मिटत जो बियोग बिधि सिरजा।

अब तौ जरूय तुमैं अरज किए ही बनै,

वेऊ दुज जानि फरमाय हैं कि फिर जा,

जो पै तुम स्वामी आजु करक उलधि जेहौं

पाती माहिं कैसे लिखुँ मिश्र मीर मिरजा।"[55]

भगवान हित :

इन्होंने संवत 1728 में 88 पृष्ठों का 'अमृतधारा' नामक ग्रंथ दोहों तथा चैपाइयों में लिखा। इस ग्रंथ में वैराग्य, योग, भक्ति तथा श्रृंगार आदि के दोहे हैं। ये अर्जुनदास के शिष्य थे तथा इनके 'भर्तहरिशत बानी' तथा रामायण ग्रंथ के फुटकर ग्रंथ भी मिले हैं-

पद्य :

"लिग देह मिलि करम कमावै, सिन सिमरन की देह सुपावै।

पुन्य करम सुख रूप रहावे, पाप नरक मिश्रित नर गावै।

पंचभूत हैं कारन रूपा, तिनते कारज बिबिध सरूपा।

दस अरू सात लिग अभासै, पुनि अस्थूल पचीस प्रकासैं।"[56]

सीतल :

इनका जन्म सं. 1887 में माना जाता है। ये 'स्वामी हरिदास वाली' सम्प्रदाय के प्रसिद्ध महंत थे। इनका 'गुलजार चमन' नामक ग्रंथ प्रसिद्ध है तथा माना जाता है कि इन्होंने ऐसे ही चार ग्रंथ और भी बनाए थे जिनके स्फुट छंद कहीं-कहीं मिलते हैं। इनके बारे में मिश्रबंधु लिखते हैं, "सीतल के चमन वास्तव में भाषा साहित्योद्यान के अलंकार हैं। इसके सब छंद प्रेम से परिपूर्ण हैं। इसमें मुख्यता नख-शिख कहा गया है और पोशाकों एवं पगड़ियों का विस्तारपूर्वक वर्णन है। ..... इनके सब छंद खड़ी बोली में हैं। खड़ी बोली में सीतल का नम्बर प्रथम जान पड़ता है, क्योंकि इनके पहले का और कोई खड़ी बोली का पद्य ग्रंथ अब तक दृष्टिगोचर नहीं हुआ, केवल किसी-किसी कवि के दो एक ऐसे छंद मिलते हैं।"[57] इनकी रचना में उपमा, रूपक, स्वच्छंद उमंग तथा अनूठेपन की झलक खूब देखने को मिलती है। कवि फारसी, संस्कृत तथा उर्दू के अच्छे जानकार थे-

पद्य :

"मुख सरद-चद्र पर ठहर गया जानी के बुद पसीने का,

या कुंदन कमल-कली ऊपर झमकाहट रकखा मीने का।

देखे से होश कहाँ रहवै जो पिदर बूअली सीने का,

या लाल बदख्शा पर खीचा चैका इल्मास नगीने का।

हम खूब तरह से जान गए जैसा आनंद का कद किया,

सब रूप सील गुन तेज पुंज तेरे ही तन में बद किया।

तुझ हुस्न प्रभा की बाकि ले फिर बिधि ने यह फरफद किया,

चपकदल सोनजु ही नरगिस चामीकर चपला चद किया।"[58]

शिव :

इस नाम के कई कवि हुए हैं। प्रथम परयागपुर जिला बहरायच के थे तथा दूसरे असनी के। पहले का रचनाकाल सं. 1800 के आसपास है तथा दूसरे का 1931 के लगभग । पहले कवि शिव के 'रसिकविलास', 'अलंकारभूषण' तथा 'पिंगल ग्रंथ मिलते हैं। इन्होंने ब्रज भाषा में ग्रंथ लिखे हैं-

पद्य :

"गोरी की हथोरी शिव कबि मेहाँदी के बिदु

इद्रती को गन जाके आगे लगै फीको है;

अंगुठा अनूप छाप मानो ससि आयो आप,

कर कज के मिलाप पात तजि ही को है

आगे और आँगुरी अँगूठी नीलमणि युत,

बैठो मनो चाय भरी चटुवा अली की है।

दबि कै छला सो कोमलाई सो ललाई दौरि,

जीतत चुनी को रँग छोर छिगुनी को है।।"[59]

सहजोबाई :

इनका रचनकाल सं. 1815 के आसपास माना गया है। "सहजोबाई ने भगवदभक्तिमयी कविता की और इसी रस में पड़कर कई ग्रन्थ लिखे, जिनमें से 'सहजोप्रकाश' का वर्णन महिला-मृदुवाणी में हुआ है। इनकी कविता में रहिमन की भांति नीति का भी कथन है।"[60] इनकी भाषा को राजपुताना

मिश्रित ब्रजभाषा बतलाया जाता है क्योंकि इनके साहित्य में कहीं-कहीं राजपुताना के शब्द भी दिख जाते हैं। इनकी रचना ह्दयग्राहिणी तथा प्रशंसनीय है-

"सहजो तारे सब सुखी गहैं चद औ सूर,

साधू चाहै दीनता चहै बडाई कूर।।

भलो गरीबी नवनता सकै न कोई मारि,

सहजो रूई कपास की काटै न तरवारि।।

साहन को तौ मै घना सहजौ निरभै रक,

कुंजर के पग बेडियां चीटी फिरैं निसक।।"[61]

भौन कवि :

इनका जीवनकाल सं. 1825 माना जाता है। इनके पिता का नाम महापात्र खुशालचंद था तथा ये जाति से भाट थे। इन्होंने 'श्रृंगाररत्नाकर' तथा 'रसरत्नाकर' नामक दो ग्रंथों का निर्माण किया था। 'रसरत्नाकर' में 430 छंद हैं तथा उनमें भावभेद तथा रसभेद का वर्णन है। कवि की भाषा शुद्ध ब्रज है-

पद्य :

"बार बार कोयन कनौटी बदलत बर

बिमल बिसाल भाल छिति पर फेरे हैं,

चूकत न चाय भरे चौकरी चलायबे मैं,

चतुर चलॉक चित चातुर के चेरे हैं।

भौन कवि कहै बाग भौंहनि के ठासे नेक,

नाचत नट से नट निबिड़ निबेरे हैं,

मैन आतुरी रे उडयो चाहैं चातुरी सै,

बीर करत खुरी से ये तुरी से नैन तेरे हैं।"[62]

5.2. फुटकल कवि और हिंदी साहित्य इतिहास लेखकों के मतों की समीक्षा :

साहित्येतिहास लेखन में अनेक विद्वानों ने अपने ग्रन्थों के माध्यम से अपने मत बतलाए हैं। फुटकल कवियों को लेकर उनकी अलग-अलग धारणाएं हैं; कई विद्वानों ने कुछ रीतिकालीन कवियों को भक्ति-धारा में मानकर व्याख्या की है तथा कुछेक ने भक्ति कवियों को रीति-परम्परा में मानकर उनका उल्लेख किया है। इसी तरह के मतों की समीक्षा का प्रयास हमने यहाँ किया है जो निम्न हैं-

5.2.1. हजारी प्रसाद द्विवेदी :

ग्रन्थ : हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के इतिहास लेखन के एक दशक बाद हजारी प्रसाद द्विवेदी साहित्येतिहास लेखन के क्षेत्र में आए। इन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से कुछ ऐसे तथ्यों तथा निष्कर्षों का प्रतिपादन किया जो साहित्येतिहास लेखन के लिए नई सामग्री, नई दृष्टि तथा नई व्याख्या लेकर आए। गणपतिचंद्र गुप्त लिखते हैं, "जहां आचार्य शुक्ल की ऐतिहासिक दृष्टि 'युग की परिस्थितियों' को प्रमुखता प्रदान

करती थीं वहां आचार्य द्विवेदी ने परम्परा का महत्व प्रतिष्ठित करते हुए उन धारणाओं को खंडित किया जो युगीन प्रभाव के एकांगी दृष्टिकोण पर आधारित थी ।"[63] अपभ्रंश को लेकर जैसे सभी आलोचकों का मत धुंधला है वैसे ही आचार्य द्विवेदी का है। एक तरफ तो आचार्य द्विवेदी कहते हैं, "अपभ्रंश को अब कोई भी पुरानी हिंदी नहीं कहता। परंतु जहां तक परम्परा का प्रश्न है, निस्संदेह हिंदी का परवर्ती साहित्य अपभ्रंश साहित्य से क्रमशः विकसित हुआ है।"[64] दूसरी तरफ हिंदी के आदिकाल का आरंभ 1000 ई से मानते हैं। इन सब मतों के बावजूद आचार्य द्विवेदी अपभ्रंश, जैन साहित्य, सिद्ध साहित्य तथा संत परम्परा पर आचार्य शुक्ल से ज्यादा दृष्टि डालते हैं। आदिकाल में आचार्य द्विवेदी किसी भी तरह का कोई खाता नहीं बनाते अपितु सीधा-सीधा कवि परिचय देते हैं।

फुटकल खाते संबंधी अंतर्विरोध हजारी प्रसाद द्विवेदी के इतिहास-ग्रन्थ में नहीं है। उन्होंने सभी कवियों को उपलब्ध सामग्री के आधार पर स्थान दिया है। इनके यहां आदिकाल के खत्म होते भक्तिकाल नहीं आता अपितु 'भक्तिकाव्य' नाम से अध्याय आता है जिसमें मुख्य प्रवृत्ति तथा गौण प्रवृत्ति नामक दो खाते नहीं हैं बल्कि इनके 'भक्तिकाव्य' में सभी प्रवृत्तियों के कवियों का क्रमशः वर्णन मिलता है। जिन कवियों को आचार्य शुक्ल ने फुटकल खाते में रखकर विवेचन किया है, उनका तथा वे कवि जो अच्छे कवि थे तथा आचार्य शुक्ल के ग्रंथ में उनका जिक्र नहीं हो पाया; उनका जिक्र भी आचार्य द्विवेदी ने भक्ति साहित्य में किया है। इन कवियों में संत तुरसी, धरणीदास गुलाब साहब, जान कवि, सधना, सेना, पीपा, धना आदि कवि हैं। भक्ति साहित्य में आचार्य द्विवेदी ने अन्य कवि की श्रेणी भी रखी है जिसमें उन्होंने लालचदास, सूरदास, मदनमोहन तथा नरोत्तमदास आदि कवियों को रखा है।

केशवदास का वर्णन आचार्य शुक्ल ने फुटकल कवियों की श्रेणी में किया है। लेकिन आचार्य द्विवेदी ने केशवदास को 'सगुणमार्गी' 'रामभक्ति का साहित्य' में प्रमुख कवियों में रखा है। इसी तरह आचार्य द्विवेदी घनानंद का भक्ति साहित्य में तथा सेनापति का रीतिकाव्य में वर्णन करते हैं जबकि आचार्य शुक्ल

के इतिहास-ग्रंथ में सेनापति भक्तिकाल के फुटकल खाते में है तथा घनानंद रीतिकालीन फुटकल खाते में । अध्ययन की सुविधा के हिसाब से आचार्य द्विवेदी का इतिहास ग्रंथ किसी प्रकार के खातों में कवियों को नहीं बांटता अपितु कवियों का प्रवृत्तियों के हिसाब से अध्ययन के लिए सुगम है।

5.2.2. डॉ. रामकुमार वर्मा :

ग्रन्थ : हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास

इन्होंने 'हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' नामक ग्रन्थ लिखा है । इन्होंने साहित्य इतिहास को पांच भागों में बांटा है जिसमें प्रथम भाग 'संधि काल' (सं 750-1000) को माना है । लेखक इस काल को आध्यात्मिक विचारधारा का मानते हैं तथा इस खंड में अपभ्रंश से निकली हुई हिंदी की रूपरेखा और वज्रयान व जैन धर्म की व्याख्या को विशेष मानते हैं। वे हिंदी के विकास के बारे में लिखते हैं, "इस प्रकार यह स्पष्टतः देखा जा सकता है कि हिंदी साहित्य के इतिहास के प्रारंभ होने के पूर्व ही बौद्ध धर्म और जैन धर्म की प्रवृत्तियां और उनके संस्कार जनता के हृदय पर विशेष रूप से अंकित थे और जब हिंदी का विकास अपनी पूर्ववर्ती अपभ्रंश की स्थिति से हुआ, तो इन्हीं धार्मिक संस्कारों से हमारे साहित्य का निर्माण हुआ।"[65] ये हिंदी साहित्य के इतिहास को आचार्य शुक्ल से तीन सौ वर्ष पूर्व खींच ले जाते हैं तथा सिद्ध साहित्य और जैन साहित्य से आरम्भ करते हैं । इन्होंने कवि सरहपा से शान्तिया तक सभी मुख्य कवियों का वर्णन किया है । सिद्धों के बाद जैन साहित्य के कवियों का भी विस्तृत वर्णन किया है। स्वयंभू देव से लेकर पुष्पदंत तथा अम्बदेव सूरि तक पूरे 22 पृष्ठों में जैन कवियों का वर्णन लेखक ने किया है। नाथों में भी लेखक ने आदिनाथ से लेकर गोपीचंद नाथ तक मुख्य नाथ कवियों को स्थान दिया है । इसी कालखंड में श्रृंगारी तथा मनोरंजक साहित्य में अब्दुर्रहमान, अमीर खुसरो आदि कवियों के साहित्य को दिखाया है।

इनके ग्रंथ में दूसरा प्रकरण 'चारण काल' (सं 1000-1375) का है। इस काल में लेखक ने सभी प्रकाशित-अप्रकाशित रचनाओं का वर्णन बखूबी किया है। डिंगल व पिंगल वर्ग की सभी रचनाएं इस कालखंड में एक व्यवस्थित जगह पर हैं। इस ग्रंथ में फुटकर नामक खाता कहीं नहीं है बल्कि अधिक से अधिक कवियों को स्थान देने का प्रयत्न लेखक द्वारा किया गया है। फुटकर शब्द किसी श्रेणी व खाते के लिए प्रयोग नहीं हुआ लेकिन कहीं-कहीं कविता, दोहा आदि के लिए प्रयोग जरूर होता है।

भक्तिकाल के संत कवियों में आचार्य शुक्ल जहां सात कवियों का वर्णन निर्गुण परम्परा में करते हैं। वहीं डॉ. वर्मा 44 कवियों का वर्णन इस परम्परा में करते हैं। आचार्य शुक्ल भक्तिकाल में सिर्फ सगुण भक्तिधारा के फुटकल कवियों का जिक्र करते हैं लेकिन डॉ. वर्मा ने सभी धाराओं की एक विस्तृत परम्परा का उल्लेख किया है तथा मुख्य कवियों को उसमें जगह दी है। राम काव्य में लेखक ने तुलसीदास के बाद सबसे श्रेष्ठ कवियों में केशवदास को रखा है। इन्होंने राम काव्य में 43 कवियों का वर्णन तुलसीदास के अतिरिक्त किया है जिनमें सेनापति कवि जैसे कई फुटकल कवि हैं। और यही संख्या आचार्य शुक्ल के इतिहास ग्रंथ में सिर्फ पांच की है। अन्नतः हम अध्ययन में पाते हैं कि हिंदी के आलोचनात्मक इतिहास में किसी तरह का कोई फुटकल खाता व कवि नहीं हैं। जिन कवियों के बारे में सामग्री प्राप्त हुई है, उन सभी कवियों को उनकी प्रवृत्ति के आधार पर एक निश्चित परम्परा में स्थान लेखक द्वारा दिया गया है जो अध्ययन की सुविधा के लिए सुगम है।

5.2.3. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय :

ग्रन्थ : हिंदी साहित्य का इतिहास

लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय की हिंदी साहित्येतिहास में एक अलग भूमिका रही है। इन्होंने तासी के फ्रेंच भाषा में लिखे ग्रन्थ को हिंदी में अनुवाद कर उसे हिंदी के पाठकों के लिए सुगम बनाया। इन्होंने

'हिंदी साहित्य का इतिहास' लिखते हुए यह स्पष्ट किया कि, "साहित्य की प्रधान प्रवृत्तियों से पाठकों को परिचित कराना उसका मुख्य उद्देश्य है ।"[66] वार्ष्णेय ने अपने ग्रन्थ में साहित्य के इतिहास को आदिकाल (943-1318), मध्यकाल(1318-1643), उत्तर मध्यकाल(1643-1800) तथा ब्रिटिश काल(1800-1948) नामक कालखंडों में विभक्त कर सभी प्रवृत्तियों तथा कवियों का विवेचन-विश्लेषण किया है। इनके यहाँ भी प्रत्येक कालखंड में 'फुटकल खाते' की तरह ही 'अन्य कवि' नामक खाता मिलता है। आदिकाल में अमीर खुसरो तथा मुल्ला दाउद का वर्णन तो मिलता है लेकिन विद्यापति को इन्होंने मध्यकाल के कृष्ण-काव्य में स्थान दिया है। विद्यापति के बारे में इनका मत है कि, "कृष्ण काव्य की परम्परा सूर से ही चलती है, यह बात नहीं है। संस्कृत में जयदेव और हिंदी से सम्बंधित कवियों में विद्यापति का नाम उल्लेखनीय है। विद्यापति को लेकर हिंदी और बंगलावालों में काफी झगड़ा हुआ है ।....वास्तव में विद्यापति के पदों की भाषा हिंदी के ही अधिक निकट है ।"[67] केशवदास को लेखक ने मध्यकाल में राम-काव्य के अंतर्गत रखते हुए लिखा है, "राम-काव्य के अंतर्गत केशवदास का नाम भी उल्लेखनीय है। किन्तु केशवदास भक्त कवि न थे। उनकी रचनाएँ भक्ति-साहित्य के साथ सम्बद्ध नहीं की जा सकती ।"[68] रहीम की 'रहीम दोहावली' आदि ग्रन्थ नीति के प्रसिद्ध ग्रन्थों में से माने हैं। कवि सेनापति को भी मध्यकाल में ही रखा है। घनानंद, ठाकुर, बोधा व आलम जैसे कवियों का वर्णन उत्तर मध्यकाल के 'अन्य कवि' में किया है। इन कवियों के बारे में लेखक लिखते हैं, "ये स्मरण रखना चाहिए कि इन कवियों ने केवल रीति सम्बन्धी ग्रन्थों की ही रचना नहीं की, वरन भक्ति और रस सम्बन्धी रचनाएँ भी की और श्रृंगार रस मुक्तक रचनाओं के साथ-साथ प्रबंध काव्यों की रचना भी की।"[69]

5.2.4. गणपति चन्द्र गुप्त :

ग्रंथ : हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास

लेखक आचार्य शुक्ल के इतिहास लेखन को एक प्रकाश स्तंभ की तरह मानते हैं। वे कहते हैं कि मध्यवर्ती समय तक साहित्य इतिहास का जो ढ़ांचा, रूपरेखा, काल विभाजन तथा वर्गीकरण प्रचलित हैं, वह बहुत कुछ आचार्य रामचंद्र शुक्ल के द्वारा ही प्रस्तुत किया गया है। इसके बावजूद लेखक मानते है, "किंतु उनके इतिहास लेखन के अनन्तर विगत तीस-पैंतीस वर्षों में हिंदी साहित्य के क्षेत्र में पर्याप्त अनुसंधान कार्य हुआ है जिससे बहुत सी ऐसी नयी सामग्री नये तथ्य और नये निष्कर्ष प्रकाश में आए हैं जो आचार्य शुक्ल के वर्गीकरण विश्लेषण आदि के सर्वदा प्रतिकूल पड़ते हैं।"[70] वे शुक्ल के साहित्येतिहास में नामकरण तथा कालखण्ड के बारे में भी कहते हैं, "उनका वीरगाथा काल - वीरगाथाओं के रचना-काल की दृष्टि से खिसक कर अब भक्तिकाल में आ गया है। इसी प्रकार ऐसी भी रचनाएं मिली हैं जिनसे रीतिकाल की प्रारंभिक सीमा बहुत पहले सिद्ध हो जाती है। वस्तुतः जिसे आचार्य शुक्ल एवं उनके अनुयायी वीरगाथा काल, भक्तिकाल एवं रीतिकाल तीन अलग-अलग काल कहते हैं वे एक की काल के साथ-साथ बहने वाली तीन धाराएं हैं।"[71] इन्होंने भी काल विभाजन को चार भागों में विभक्त कर निम्न नाम दिए हैं। प्रथम आदिकाल (सन् 1350-1600ई.); द्वितीय पूर्व मध्यकाल (सन्1350-1600); तृतीय उत्तर मध्यकाल (सन् 1600-1857 ई.) तथा चतुर्थ आधुनिक काल (सन् 1857 से अब तक)। लेखक अपभ्रंश काव्य का जिक्र अवश्य करते हैं अपितु इसे हिंदी के आदिकाल में सम्मलित नहीं करते। लेखक प्रामाणिक रचनाओं के आधार पर आदिकाल को पांच भागों में विभक्त करते हैं-1. जैन रास काव्य 2. फागु काव्य 3. चतुष्पदी काव्य 4. महाराष्ट्रीय काव्य और 5. ऐतिहासिक रासो काव्य।

पूर्व मध्यकाल में लेखक छः काव्य परम्पराओं का अस्तित्व बतलाते हैं। इन्होंने भी फुटकल श्रेणी की तरह ही, "अन्य कवि"[72] नाम श्रेणी रखी है जिसमें इन्होंने धना, पीपा, सेन, जयदेव, गरीबदास, केशवदास, तुलसी साहब, हरिदास आदि कवियों को रखा है।

इन कवियों के बारे में लेखक लिखता है, "इस प्रकार इस परम्परा के ज्ञात कवियों की संख्या शताधिक है, जिन सबका परिचय देना यहां संभव नहीं।"[73] लालचदास के बारे में लेखक लिखता है कि परवर्ती युग में भागवत पुराण तथा कृष्ण-चरित संबंधी प्रबंध काव्य में प्रथम वर्ग के काव्य हरि-चरित या 'भागवत दशम-स्कंध (1530ई.) हैं। इसी तरह वे केशवदास की 'रामचंद्रिका' को राम सम्बन्धी प्रबंध काव्यों की परम्परा में महत्वपूर्ण मानते हैं। केशवदास के संदर्भ में लेखक लिखता है, "इसमें कोई संदेह नहीं है कि केशवदास को प्रबंधन की दृष्टि से 'रामचंद्रिका' में अधिक सफलता नहीं मिली है, तथा आचार्य शुक्ल के अनेक आपेक्ष सर्वथा यथार्थ हैं। किंतु साथ ही यह भी स्पष्ट है कि आचार्य शुक्ल ने केशव के दृष्टिकोण, लक्ष्य एवं वातावरण को समझाने का प्रयास भी बहुत गंभीरता से नहीं किया अन्यथा यह स्पष्ट हो जाता कि केशवदास जिस लक्ष्य एवं वातावरण से प्रेरित थे, उसमें यही संभव था।"[74] कवि सबल सिंह चौहान को भी लेखक भक्तिकाल के 'रामभक्ति शाखा' में रखते हैं।

लेखक विद्यापति को भी भक्तिकाल (पूर्व मध्यकाल) के कृष्ण-भक्ति शाखा में रखते हैं। लेखक के अनुसार विद्यापति काव्य रूप एवं शैली की दृष्टि से सफल कवि हैं। प्रेम के क्षेत्र में विद्यापति स्वच्छंद व रोमांटिक कवि के रूप में दिखाई देते हैं। हालांकि विद्यापति के भक्त व श्रृंगारी कवि के मत पर लेखक आचार्य शुक्ल से सहमत हैं, "कुछ आलोचकों ने इनके भक्ति संबंधी पदों को लेकर इन्हें भक्त कवि सिद्ध करने का प्रयास किया है, अवश्य ही वे वृद्धावस्था में भक्ति एवं वैराग्य से ओत-प्रोत हो गए होंगे, जैसा कि केशव, बिहारी, पद्माकर, आदि के साथ हुआ, किंतु मूलतः वे श्रृंगारी कवि सिद्ध होते हैं। उनकी सौदंर्य भावना एवं रसिकता इतनी अधिक बढ़ी हुई है कि वे नारी के अंग विशेषों का वर्णन करते समय उन्हें कई बार अपने इष्टदेव शिव से भी बढ़कर घोषित कर देते हैं-

चंद चरचु पयोधर रे,

ग्रिम गज मुकुता हार।

भसम भरल जनि संकर रे,

सिर सुरसरि जलधार ।"[75]

5.2.5. आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र :

ग्रंथ : हिंदी साहित्य का अतीत

लेखक ने इस ग्रन्थ में हिंदी साहित्य के इतिहास को तीन भागों में बांटा है, प्रथम भाग आदिकाल (सं.1000-1400), द्वितीय भाग मध्यकाल (1400-1900सं.) तथा आधुनिक काल (1900-2000सं.) । लेखक लिखते हैं, "प्रस्तुत पुस्तक में हिंदी की व्याप्ति, साहित्य की निरूक्ति और अतीत की अलक्षित विशेषता की दृष्टि में रखकर उन विवेच्य विषयों का विचार करने का प्रयास किया गया है जिनके नियत रूप में मतभेद हैं ।"[76] इन्होंने आदिकाल को अपभ्रंशवाग्मय, पिंगल काव्य, डिंगल काव्य, राजस्थानी (लोकभाषा) काव्य, मागधी काव्य तथा खड़ी बोली की रचना नामक श्रेणी बनाकर बतलाया है । आचार्य शुक्ल की मान्यता पर आचार्य मिश्र अमीर खुसरो के बारे में लिखते हैं, "आदिकाल के दूसरे प्रमुख कवि जो फुटकल खाते में दिखाई देते हैं अमीर खुसरो हैं। इनकी दो प्रकार की रचनाएं हैं, एक तो ब्रजभाषा की और दूसरी खड़ी बोली की । ..... यह भी तो विचार करना चाहिए कि ऐसी रचनाएं 'काव्य' या 'साहित्य' मानी जा सकती है या नहीं ।"[77] ये नाथ, सिद्ध आदि की रचनाओं के बारे में अपना मत बतलाते हैं, "रसात्मक और वक्रोक्ति-विशिष्ट कृति ही साहित्य का नाम पाती रही। प्रश्न होता है कि तब इतिहास में उन रचनाओं का आंकलन क्यों किया गया जिनमें ये विशेषताएं नहीं हैं। इसका कारण यही जान पड़ता है कि प्राचीन काल में जो रचनाएं हिंदी भाषा में हुई उनका विचार साहित्य की दृष्टि से न करके भाषा की दृष्टि से किया गया। परमार्थतः नाथ, सिद्ध तथा कबीर आदि ज्ञानमार्गी संतों

की शतशः साम्प्रदायिक रचनाएँ साहित्य के अंतर्गत नहीं आती ।"[78] लेखक सिद्धों में 18 सिद्धों तथा जैन कवियों में 11 कवियों का अपने ग्रन्थ में उल्लेख करते हैं।

विद्यापति के बारे में आचार्य विश्वनाथ बड़े रोचक ढंग से आचार्य शुक्ल के मत पर प्रश्न उठाते हुए लिखते हैं, "हिंदी साहित्य के इतिहास लेखक आदियुग में विद्यापति को अपना कवि कहकर इन्हें फुटकल खाते में रखकर संतुष्ट हो जाते हैं।"[79] आगे वे लिखतें हैं, "यदि थोड़ी देर के लिए यह मान लिया जाए कि पृथ्वीराज रासो या बीसलदेव रासो उतनी ही प्राचीन रचनाएं हैं जितनी उन्हें प्रामाणिक कहने वाले मनवाना चाहते हैं तो भी यही कहा जा सकता है कि आदिकाल की वह एक ही शाखा थी। पर आगे का हिंदी साहित्य जिस सरणि पर चला और जिसमें प्रभूत वाड.मय निर्मित हुआ वह विद्यापति ही की सरणि थी। विद्यापति ने जिन गीतों का निर्माण किया उन गीतों की परम्परा उसी रूप में भक्ति रंजित होकर कृष्ण भक्त कवियों में दिखाई देती है। भक्तिकाल में कृष्ण भक्त कवियों के गीतों का जो वाड.मय पूंजीभूत हुआ वही उस युग में परिमाण में अधिक है। ....यदि बाहुल्य की दृष्टि से भक्तिकाल का नाम रखा जाए तो उसे कृष्णकाल ही कहना पड़ेगा।"[80] लेखक रामकाव्य में केवल तुलसीदास का जिक्र करते हैं तथा मीरां को आदिकाल के राजस्थानी (लोकभाषा) काव्य में स्थान देते हैं।

5.2.6. रामशंकर शुक्ल रसाल

ग्रंथ : हिंदी साहित्य का इतिहास

इस ग्रंथ में लेखक साहित्य के इतिहास को तीन भागों में बांटते हैं। प्रथम भाग का नाम आदिकाल, द्वितीय काल का मध्यकाल तथा तीसरे को आधुनिक तथा वर्तमान काल का नाम दिया है। ग्रंथ की विषयसूची के अनुसार प्रत्येक कालखण्ड की सभी प्रवृत्तियों की रचनाओं तथा अधिकतम कवियों का जिक्र लेखक ने किया है। विद्यापति को ही लेखक कृष्णभक्ति काव्य का हिंदी साहित्य में

श्रीगणेश करने वाले प्रथम कवि के रूप में मानते हैं। लेखक कहते हैं, "आप का एक और गहरा प्रभाव कृष्णकाव्य के लेखकों पर पड़ा, कि वे कृष्ण भक्ति के काव्य में मानवीय लौकिक श्रृंगार का अधिकाधिक समावेश करने लगे और उसे लौकिक श्रृंगार रस से पूर्ण रूप से पग्प्लिावित करते-करते कुछ अश्लील सा भी बनाने लगे।"[81] इन्होंने भी आचार्य शुक्ल की तरह ही हर कालखंड के अंत में अन्य कवि, अन्य रचनायें नामक श्रेणी का निर्माण किया जिसमें उन कवियों को रखा जिनकी रचनाएं निम्न व साधारण श्रेणी की हैं, "अस्तु इन कवियों की रचनाओं पर इस नवीन रूपांतर का अच्छा प्रतिबिंब आभासित हुआ है। यदपि इनकी रचनाएं भक्ति को लिए हुए हैं तथापि उतनी प्रधानता, प्रबलता तथा प्रुचरता के साथ नहीं जितनी सूर आदि भक्त कवियों की रचनाएं लिए हुए हैं।"[82] आचार्य रामचंद्र शुक्ल कृत इतिहास ग्रंथ के कई फुटकल कवि इनके मुख्य धारा की श्रेणियों में जगह बनाए हुए हैं। बावजूद इसके इन्होंने केशवदास तथा सेनापति को अपने काव्य कला काल (सं. 1700-1900) में जगह दी है। कला काल में कवि अन्य कवि के स्थान पर साधारण कवि की श्रेणी बनाकर उसमें बेनी कवि, मंडन कवि, बीर कवि, गंजन, बैरीसाल, दत्त, मनीराम, मिश्र आदि कई कवियों का जिक्र करते हैं।

5.2.7. बच्चन सिंह :

ग्रंथ : हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास

बच्चन सिंह आचार्य शुक्ल के इतिहास के बारे में लिखते हैं, "आरम्भ में ही कह दूं कि न तो आचार्य शुक्ल के 'हिंदी साहित्य का इतिहास' को लेकर दूसरा नया इतिहास लिखा जा सकता है और न उसे छोड़कर।"[83] साहित्य के काल विभाजन को लेकर लेखक का मत है कि 'आदिकाल', 'भक्तिकाल' तथा 'आधुनिक काल' नामक संज्ञाओं पर काल-विभाजन पुराना तरीका हो गया है। अगर भाषा की दृष्टि से देखा जाए तो आदिकाल का समय (1000-1400ई.) महत्वपूर्ण है। भक्तिकाल के बारे में भी लेखक का मत है कि भक्तिकाल भक्तिकाल है मध्यकाल नहीं, "मध्यकाल सामान्यतः जकड़ी हुई

मनोवृत्ति का परिचायक है।"[84] विषय-सूची में लेखक ने साहित्य को चार भागों में बांटा है- प्रथम भाग अपभ्रंश काल तथा द्वितीय भक्तिकाल (1400-1650) तृतीय रीतिकाल (1650-1857) व चतुर्थ आधुनिक काल है। इन्होंने अपभ्रंश काल में सरहपा से लेकर पुष्पदंत, गोरखनाथ तथा श्रृंगार व वीर काव्य में हेमचंद्र,अद्दहमाण, मेरूतुंग आदि कवियों का वर्णन किया है। रासो काव्य में बीसलदेव रासो, जगनिक आदि कवियों का वर्णन है। फुटकल खाते की तरह ही बच्चन सिंह ने भी 'अन्य काव्य' नामक खाते का निर्माण किया है जिसमें चरित काव्य, आध्यात्मिक काव्य और कथा काव्य नामक काव्यों को जगह दी है। उनके अनुसार, "हरिभद्र सुरि (1159) का 'नेमिनाथ चरिउ, विनय चन्द्र सुरि (1200) की 'नेमिनाथ चौपाई' ऐसे ही काव्य हैं। चौपाई में पहली बार बारहमासा का वर्णन मिलता है जिसे हिंदी प्रेमाख्यानकों ने अपनाया। धनपाल की 'भविसयत्त कथा' लौकिक चरित काव्य है। इन चरित काव्यों का महत्व केवल रूप के कारण है। आध्यात्मिक काव्यों में पाहुड़ दोहा, परमात्म प्रकाश, योगसार आदि साम्प्रदायिक ग्रंथ हैं। साहित्यिक दृष्टि से इनका कोई महत्व नहीं है।"[85] विद्यापति के बारे में लेखक का मत है, "अतः हिंदी के पहले कवि विद्यापति ही ठहरते हैं।"[86] लेखक के अनुसार 14 वीं शताब्दी के अंत तक अपभ्रंश का स्थान देशभाषाएं ले चुकी थीं और देशभाषा में रचित प्रथम रचना 'पदावली' है। भक्तिकाल में भी बच्चन सिंह के इतिहास ग्रंथ में 'अन्यकविः अन्य प्रवृत्तियां' नामक श्रेणी है जिसमें मुख्यधारा से अलग कवियों को स्थान दिया है। गंग, रहीम, बनारसीदास, सेनापति, नरोत्तमदास, केशवदास आदि कवि इस खाते में हैं। इन सभी कवियों का वर्णन आचार्य शुक्ल ने फुटकल कवियों में लिया है। रीतिकाल में रचनाकार ने रीतिबद्ध, रीतिमुक्त तथा रीतीतर काव्य में विभक्त कर कवियों का विवेचन किया है। जो कवि इन काव्यों में साधारण श्रेणी के हैं, उन्हें अन्य कवि नामक खाते में डाल दिया गया है।

5.2.8. सुमन राजे :

ग्रंथ : हिंदी साहित्य का आधा इतिहास

हिंदी के साहित्येतिहास में लिखे गए अधिकतम ग्रंथों में किसी कवयित्री का नाम नहीं लिया गया। मीरां और सहजोबाई आदि एक दो कवयित्रियों को छोड़ दें तो सारे इतिहास ग्रंथों में पुरूष कवियों का ही वर्णन है। सुमन राजे द्वारा हिंदी साहित्येतिहास में किया गया ये पहला प्रयास है जिसमें महिला लेखन को दर्शाने का प्रयास किया गया है। लेखिका कहती हैं, "जहां पुरूष मौन हो जाता है वहां जन्म लेता है महिला लेखन जो अंश खाली छूट गए हैं या छोड़ गए हैं, उनके भराव में मिलता है महिला लेखन।"[87] इन्होंने अपने ग्रंथ में कवयित्रियों द्वारा लिखे अनेक प्रसंगों का वर्णन सुंदर ढंग से किया है। संस्कृत और प्राकृत कवयित्रियों में लेखिका ने विज्जका, फाल्गुन हस्तिनी, विकटनितम्बा, रजक सरस्वती आदि का वर्णन किया है। इतिहास लेखन में जितनी भी सामग्री महिला लेखन से सम्बंधित मिलती है वह लोकगीतों के माध्यम से ही मिलती है। लेखिका का मत है, "मेरा मानना है कि इस तथाकथित आदिकाल का जो भी स्त्री लेखन है वह लोकगीतों और लोकगाथाओं के रूप में है, जिसे साहित्येतिहास से बाहर कर दिया गया है।"[88] मीरां के बारे में इन्होंने लिखा है, "इसलिए शुक्लजी को मीरां के लिए 'फुटकर' खाता खोलना पड़ा।"[89] लेकिन आचार्य शुक्ल के इतिहास ग्रंथ में मीरां फुटकल खाते में न होकर कृष्णभक्ति शाखा के मुख्य कवियों में से एक हैं। इन्होंने प्रवीणराय पातुर, ब्रजकुंवरि बाई, छत्रकुवंरि बाई, कृष्णावती मुक्ताबाई आदि कवयित्रियों का वर्णन मध्यकालीन कवयित्रियों में किया है। महिला लेखन पर इतिहास लेखन में सुमन राजे का यह अनूठा प्रयास है।

इन सभी साहित्येतिहास ग्रन्थों के इतर भी अनेक ग्रन्थ हैं जिनमें विद्वानों द्वारा अलग-अलग मत प्रस्तुत किये गए हैं। डॉ. रामकिशोर शर्मा ने अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में आदिकाल आठवीं शताब्दी से माना है। इन्होंने सरहपा को पहला कवि मानते हुए सिद्ध, नाथ, जैन तथा संत काव्य को

काव्य मानकर उनके साहित्य का विवेचन किया। आदिकाल में इन्होंने रासो परम्परा में 13 प्रामाणिक तथा 5 अप्रामाणिक एवं अर्धप्रामाणिक ग्रन्थों का वर्णन किया है। इनके यहाँ भी फुटकल खाते की तरह ही 'अन्य कवि' नामक श्रेणी है। केशवदास को इन्होंने रीति परम्परा में पहले स्थान पर रखा है तथा सेनापति को रीतिसिद्ध कवियों में स्थान दिया है। रसखान को रीतिमुक्त कवियों में पहले स्थान पर रखा है। कवि आलम को भी लेखक आचार्य शुक्ल के भक्तिकालीन फुटकल कवियों से उठाकर रीतिकाल के रीतिमुक्त कवियों में घनानंद से ऊपर रखते हैं। इनके अतिरिक्त साहित्येतिहास परम्परा में डॉ. रामसजन पांडे अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में आदिकाल को सांतवीं से चौदहवीं शताब्दी के बीच मानकर रासो साहित्य, सिद्ध साहित्य, नाथ साहित्य, जैन साहित्य, का समग्र अध्ययन प्रस्तुत करते हैं। इन्होंने रासो काव्य को छोड़कर सभी काव्यों की विशेषता, प्रवृत्ति, रस निरूपण, रूप चित्रण आदि का वर्णन विस्तृत रूप से किया है लेकिन कवियों का न के बराबर। विद्यापति के संदर्भ में लेखक लिखते हैं, "विद्यापति के पद चाहे वे श्रृंगारमूलक हों या भक्तिमूलक हों, सौंदर्यमूलक हों या संस्कृतिमूलक, गीतात्मक हैं। विद्वानों ने उन्हें हिंदी गीतिकाव्य परम्परा का वास्तविक प्रवर्तक स्वीकार किया है।"[90] सूफी धारा में इन्होंने मौलाना दाऊद ज्ञान कवि, हुसैन अली, गुलाम अशरफ शेख 'निसार' शाह नजफ अली नासीर आदि अतिरिक्त कवियों का जिक्र भी किया है। इन्होंने प्रत्येक कालखण्ड के कवियों की बजाय काव्य पर ज्यादा ध्यान दिया है।

अन्य कवि : (सं. 1375-1900)

नाम	**सं./ई.**	**रचनाएं**
रामानंद स्वामी	1400ई.	फुटकर
भवानंद	1400 ई.	अमृतसार

भगोदास	1410 ई.	लघु बीजक
स्नुतगोपाल	1420 ई.	सुखनिधान
कमाल कवि	1450 ई.	फुटकर
चरणदास	1480 ई.	ज्ञातस्वरोदय
गोप कवि		रामभूषण/अलंकारचंद्रिका/रामालंकार

संत काव्य :

सुथरादास	सं.1658	मलूक-परिचय
धरणीदास	सं.1676	प्रेमप्रगास
चरनदास	सं.1760	अमरलोक/अखंडधाम/भक्तिपदारथ/ज्ञानसरोदय शब्द
बालकृष्ण नायक	सं.1765	ध्यान मंजरी/नेह प्रकाशिका
रामरूप	सं.1807	बारहमासा
तुलसीसाहब(हाथरस वाले)	सं.1845	घट रामायण/शब्दावली/रत्नसागर
तानसेन	सं.1588	संगीतसागर/रागमाला/श्रीगणेशस्त्रोत

राम काव्य :

बलदास	सं.1687	चित्राबोधन
लालदास	सं.1700	अवध विलास

बालभक्ति	सं.1750	नेहप्रकाश/दयाल मंजरी
रामप्रिया शरण	सं.1760	सीतायण
जानकी रसिक शरण	सं.1760	अवधी सागर
प्रियादास	सं.1761	टीका (भक्तमाल की)
प्रेमसखी	सं.1791	'जानकी राम को नखशिख' होरी छंदादि प्रबंध/ कवित्तादि प्रबंध
कुशल मिश्र	सं.1826	गंगा नाटक
रामचरणदास	सं.1826	दृष्टांतबोधिका/कवितावली/रामायण पदावली/ रामचरित/रसमलिका
कृपानिवास	सं.1843	भावनापचीसी/समयप्रबंध/माधुरीप्रकाश/ जानकी सहस्त्रनाम/लगन पचीसी
गंगा प्रसाद व्यास	सं.1844	राम आग्रह
सर्वसुख शरण	सं.1857	बारहमासा विनय/तत्वबोध
भगवानदास खत्री	सं.1857	महारामायण
गंगाराम	सं.1857	शब्द ब्रह्म
रामगोपाल	सं.1857	अष्टयाम

परमेश्वरी दास	सं.1860	कवितावली
पहलवान दास	सं.1860	मसले नामा
रामगुलाम द्विवेदी	सं.1870	प्रबंध रामायण
जानकी चरण	सं.1877	प्रेम प्रधान/सियाराम रसमंजरी
शिवानंद	सं.1882	श्रीरामध्यान मंजरी
जीवाराम(युगलप्रिया)	सं.1887	पदावली /अष्टयाम
बनादास	सं.1890	(30 से अधिक रचना हैं) लेकिन साधारण हैं- रामछटा /हनुमत विजय
मोहन	सं.1898	चित्रकूट महात्मय
रत्नहरि	सं.1898	दूरादूरार्थ दोहावली/जमक दमक दोहावली/रामरहस्य पूर्वार्ध/रामरहस्य उत्तरार्थ
रामनाथ	सं.1900	रसभूषण /महाभारत गाथा/ जानकी पचीसी

वीर काव्य :

मान	सं.1680	रजविलास
हरिनाम	1683 ई.	केसरी सिंह समर
गोरेलाल	1710 ई.	छत्रप्रकाश/छत्रसार राजविनोद

सूर्यमल	1840 ई.	वंशभास्कर
चन्द्रशेखर	1845 ई.	हम्मीर हठ
रामचंद्र साकी	1720 ई.	रायविनोद/जंबूचरित्र
शिवनाथ द्विवेदी	सं.1828	रसबृष्टि
प्रेमदास अग्रवाल	1828	प्रेमसागर/श्रीकृष्ण-लीला/भगवत विहार लीला प्रेम परिचय
द्विज प्रहलाद	सं.1830	जयचंद्रिका/जगन्नाधारक/भवानी भुजग
शिवप्रसाद कायस्थ	सं.1830	रसभूषण/अदभुत रामायण
मंजित द्विज	सं.1836	सुरभी दानलीला
बलदेव (बुंदेलखंडी)	सं.1855	सत्कविगिरा विलास संग्रह
गुमान तिवारी	सं.1838	छदाटवी /कृष्णचंद चंद्रिका
कल्याण डकोर	सं.1845	छंदभास्कर/रसचंद्र
माखन पाठक	सं.1860	वसंत मंजरी
भोगीलाल दुबे	सं.1856	अलंकार प्रदीप अलंकार बखत बिलास (नायिका भेद)

कृष्ण काव्य :

लालदास	सं.1585	हरिचरित्र / भागवत दशम स्कन्ध भाषा।
ललीर	सं.1608	डंगौ पर्व

लक्ष्मीनारायण	सं.1637	प्रेमतरंगिणी
गणेश मिश्र	सं.1645	विक्रम विलास
सुखदेव मिश्र	सं.1700	अध्यात्म प्रकाश/वृत विचार
		फजल अली प्रकाश/ पिंगल छंद विचार

(सारणी की समस्त सामग्री हिंदी साहित्य का बृहत साहित्य (भाग पांच), हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास, हिंदी साहित्य उदभव और विकास, हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, मिश्रबंधु विनोद, शिवसिंह सरोज आदि इतिहास ग्रंथों से ली गई हैं।)

अन्य कवयित्रियां :

झीमा चारणी	सं.1460	फुटकर दोहे
पदमा चारणी	सं.1654	फुटकर दोहे
बिरजू बाई	सं.1800	फुटकर दोहे

संत कवयित्रियां

मुक्ताबाई	सं.1345	फुटकर दोहे
दयाबाई	सं.1800	दयाबोध/विनयमालिका
इन्द्रावती	सं.1703-83 के बीच	फुटकर

कृष्ण काव्य की कवयित्रियां :

गंगाबाई	सं.1607	गंगाबाई
सोन कुंवरि	सं.1630	सूवर्ण बेलि
वृषभान कुंवरि	सं.1885	भक्ति विरूदावली /औरंगचंद्रिका /दानलीला
ब्रजदासी रानी बोकावली	सं.1776	ब्रजदासी भागवत
सुन्दर कुंवरि बाई	सं.1791	नेह निधि/राम रहस्य/संकेत यगल/रंस पुंज/सार संग्रह
ताज	सं.1700	मुक्त रचना
वीरां	सं.1700	फुटकर लोक गीत
छत्र कुंवरि बाई	सं.1845	प्रेम विनोद

श्रृंगार काव्य की कवयित्रियां :

रूपमती बेगम	सं.1637	फुटकर दोहे
शेख रंगरेजन	सं.1650	मुक्त रचना

स्फुट काव्य कवयित्रियां

रत्नावलि	सं.1613	फुटकर रचनाएं
कविरानी चौबे	सं.1752	फुटकर दोहे/ इन्होंने नीति, पति सेवा और नारी धर्म आदि विषयों पर रचना की।
नैना योगिनी	सं 1893	सांवर तंत्र

फुटकल कवियों के अध्ययन से हमें पता चलता है कि ये कवि अपनी भाषा तथा नवीन शैली के आधार पर प्रयोगों के कवि हैं। एक कालखंड के खत्म होते ही दूसरा कालखंड शुरू हो जाता है तो ये कवि पहले ही आगामी कालखंड की प्रवृत्तियां बतला देते हैं। यूँ कहें कि ये संक्रमण के नहीं अपितु संगम के कवि हैं। इस अध्याय में हिंदी के आरम्भ, हिंदी के पहले कवि तथा साहित्य के सीमांकन की समस्या पर विचार किया है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक कालखंड में जो कवि महत्वपूर्ण हैं तथा जिनका जिक्र शुक्लजी के यहाँ या तो हुआ नहीं या न के बराबर हुआ है, उनका विवेचन-विश्लेषण किया है। फुटकल कवियों के बारे में शुक्लजी के सभी अंतर्विरोधों की चर्चा इस अध्याय में की है। हिंदी साहित्य इतिहास लेखकों के मतों की समीक्षा तथा फुटकल कवियों के बारे में उनकी अवधारणाओं को बतलाने का प्रयास किया है। इन सबके अतिरिक्त विभिन्न ग्रन्थों से जो कवि महत्वपूर्ण लगे हैं, उनको भी सारणी में जगह दी है। साहित्येतिहास में कुछ कवयित्रियों का जिक्र भी मिलता है, उनको भी अध्याय के अंत में स्थान दिया है।

संदर्भ :

1. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 4
2. वही; पृ.- 17
3. वही; पृ.- 134
4. वही; पृ.- 27
5. गुप्त, गणपतिचन्द्र; हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास(प्रथम खण्ड); लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद; पृ.- 68-69
6. सिंह, नामवर; हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- 23-24
7. शर्मा, डॉ. रामकिशोर; हिंदी साहित्य का इतिहास; प्रयाग पुस्तक सदन इलाहाबाद; पृ.- 59
8. सिंह, नामवर; हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग; लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद; पृ.- 207
9. वही; पृ.-207
10. कोछड़, हरिवंश; अपभ्रंश साहित्य; एस चंद एंड कम्पनी, नई दिल्ली; पृ.- 70
11. सिंह, बच्चन; हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास; राधाकृष्ण प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 39
12. वही; पृ.- 39
13. सिंह, नामवर; हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- 178-179
14. वर्मा, डॉ. रामकुमार; हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ. 76
15. सिंह, नामवर; हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- 179-180
16. मिश्र, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद; हिंदी साहित्य का अतीत; वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 57
17. साकृंत्यायन, राहुल; हिंदी काव्यधारा; किताब महल इलाहाबाद; पृ.- 182
18. वही; पृ.- 204
19. वही; पृ.- 221
20. वही; पृ.- 225
21. वही; पृ.- 292

22. वर्मा, डॉ. रामकुमार; हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- 118
23. मिश्र, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद; हिंदी साहित्य का अतीत; वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 60-61
24. द्विवेदी, हजारी प्रसाद; हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास; राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 23
25. साकृंत्यायन, राहुल; हिंदी काव्यधारा; किताब महल इलाहाबाद; पृ.- 302
26. वर्मा, डॉ. रामकुमार; हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- 111
27. साकृंत्यायन, राहुल; हिंदी काव्यधारा; किताब महल इलाहाबाद; पृ.- 260
28. द्विवेदी, हजारी प्रसाद; हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास; राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 26
29. सिंह, नामवर; हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- 198
30. मिश्र, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद; हिंदी साहित्य का अतीत; वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 58
31. वर्मा, डॉ. रामकुमार; हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- 77
32. वही; पृ.-78
33. त्रिपाठी, करूणापति (सं.); हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास (तृतीय खण्ड); नागरी प्रचारिणी सभा; पृ.- 265
34. साकृंत्यायन, राहुल; हिंदी काव्यधारा; किताब महल इलाहाबाद; पृ.- 435
35. त्रिपाठी, करूणापति (सं.); हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास (तृतीय खण्ड); नागरी प्रचारिणी सभा; पृ.- 253
36. वही; पृ.- 254
37. शर्मा, राजमणि; अपभ्रंश भाषा और साहित्य; भारतीय ज्ञानपीठ नयी दिल्ली; पृ.- 93-94
38. साकृंत्यायन, राहुल; हिंदी काव्यधारा; किताब महल इलाहाबाद; पृ.- 328
39. शर्मा, राजमणि; अपभ्रंश भाषा और साहित्य; भारतीय ज्ञानपीठ नयी दिल्ली; पृ.- 110-111
40. वर्मा, डॉ. रामकुमार; हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- 126
41. वही; पृ.- 227

42. दीक्षित, प्रो. सूर्यप्रसाद; हिंदी साहित्येतिहास की भूमिका (भाग - 1); उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ; पृ.- 148

43. द्विवेदी, हजारी प्रसाद; हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास; राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 73

44. वही; पृ.- 73

45. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र; हिंदी साहित्य का इतिहास; कमल प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 55

46. गुप्त, गणपतिचन्द्र; हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास(प्रथम खण्ड); लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद; पृ .- 165

47. वही; पृ.- 165

48. वर्मा, डॉ. रामकुमार; हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- 278

49. द्विवेदी, हजारी प्रसाद; हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास; राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 91

50. वही; पृ.- 92

51. मिश्रबंधु ; मिश्रबंधु विनोद (भाग-1); गंगा पुस्तकमाला-कार्यालय लखनऊ; पृ.- 247

52. वर्मा, डॉ. रामकुमार; हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- 458

53. गुप्त, किशोरीलाल (सं.); शिवसिंह सरोज; हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग; पृ.- 571

54. वही; पृ.- 572

55. मिश्रबंधु ; मिश्रबंधु विनोद (भाग-2); गंगा पुस्तकमाला-कार्यालय लखनऊ; पृ.- 117

56. वही; पृ.- 476

57. वही; पृ.- 582

58. वही; पृ.- 583

59. वही; पृ.- 673

60. वही; पृ.- 721

61. वही; पृ.- 722

62. वही; पृ.- 809

63. गुप्त, गणपतिचन्द्र; हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास(प्रथम खण्ड); लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद; पृ.- 33

64. द्विवेदी, हजारी प्रसाद; हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास; राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 24

65. वर्मा, डॉ. रामकुमार; हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ .- 27

66. वार्ष्णेय, लक्ष्मीसागर; हिंदी साहित्य का इतिहास; लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद; पृ.- वक्तव्य

67. वही; पृ.- 155

68. वही; पृ. 149

69. वही; पृ. 215

70. गुप्त, गणपतिचन्द्र; हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास(प्रथम खण्ड); लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद; प्राककथन, पृ.- vi

71. वही; प्राक्कथन, पृ.-vi

72. वही; पृ.-167

73. वही; पृ.-168

74. वही; पृ.- 227

75. वही; पृ.-294

76. मिश्र, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद; हिंदी साहित्य का अतीत; वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली; पृ.- 8

77. वही; पृ.- 44-45

78. वही; पृ.- 45

79. वही; पृ.-120

80. वही; पृ.- 124

81. 'रसाल', रामशंकर शुक्ल; हिंदी साहित्य का इतिहास; के. बी. अग्रवाल एट दी शान्ति प्रेस, इलाहाबाद; पृ.- 103

82. वही; पृ.- 326

83. सिंह, बच्चन; हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास; राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली; पृ.- भूमिका:vii

84. वही; भूमिका: viii

85. वही; पृ.- 42

86. वही; पृ.- 61

87. राजे, सुमन; हिंदी साहित्य का आधा इतिहास; भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली; चैथा संस्करणः 2011; पृ.- 30

88. वही; पृ.-142

89. वही; पृ.-146

90. पाण्डेय, डॉ. रामसजन; हिंदी साहित्य का इतिहास; संजय प्रकाशन नई दिल्ली; संस्करणः 2013; पृ.- 96